



कृषक मंच

कृषक मंच

मासिक कृषि पत्रिका

खंड-2 अंक- 10, अक्टूबर- 2026





कृषक मंच

मासिक कृषि पत्रिका

ISSN: 3049-2211

सम्पादक मंडल

डा. देवराज सिंह

मुख्य सम्पादक

सहायक प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष
सब्जी विज्ञान विभाग
कृषि विज्ञान विभाग, इनवर्टिस विश्वविद्यालय, बरेली (उ.प्र.)।

प्रिया पाण्डेय

सहायक मुख्य सम्पादक

शोधार्थी
ए.के.एस. विश्वविद्यालय, सतना (म.प्र.)।

सहायक सम्पादक

डा. विक्रमा प्रसाद पाण्डेय

पूर्व अधिष्ठाता (उद्यान महाविद्यालय)

आ. न. दे. कृ. एवं प्रौ. वि.वि., कुमारगंज, अयोध्या (उ.प्र.)।

डा. अरविन्द कुमार चौरसिया

सहायक प्राध्यापक (उद्यान विज्ञान)

पूर्वोत्तर पर्वतीय विश्वविद्यालय, शिलांग (मेघालय)।

डा. महेन्द्र कुमार यादव

सहायक प्राध्यापक (सब्जी विज्ञान)

आर.एन.बी. ग्लोबल विश्वविद्यालय, बीकानेर (राजस्थान)।

डा. वर्तिका सिंह

सहायक प्राध्यापक (फल विज्ञान)

आई.टी.एम. विश्वविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)।

डा. सचि गुप्ता

सहायक प्राध्यापक (पुष्प विज्ञान)

आ. न. दे. कृ. एवं प्रौ. वि.वि., कुमारगंज, अयोध्या (उ.प्र.)।

डा. रविकेश कुमार पाल

सहायक प्राध्यापक (सस्य विज्ञान)

रामा विश्वविद्यालय, कानपुर (उ.प्र.)।

डा. सरिता

सहायक प्राध्यापक (पौध रोग विज्ञान)

आर.एन.बी. ग्लोबल विश्वविद्यालय, बीकानेर (राजस्थान)।

डा. रविशंकर

सहायक प्राध्यापक (कीट विज्ञान)

स.व.भा.प.कृ. एवं प्रौ. वि.वि., मेरठ (उ.प्र.)।

डा. देवेश तिवारी

सहायक प्राध्यापक (उद्यान विज्ञान)

पूर्वोत्तर पर्वतीय विश्वविद्यालय, तूरा कैपस (मेघालय)।

डा. कुमार अंशुमान

सहायक प्राध्यापक (मृदा विज्ञान)

के.एन.आई.पी.एस.एस., सुल्तानपुर (उ.प्र.)।

डा. मंजीत कुमार

सहायक प्राध्यापक

लिंगायस विद्यापीठ, फरीदाबाद, हरियाणा।

डा. विवेक पाण्डेय

सहायक प्राध्यापक (सस्य विज्ञान)

इनवर्टिस विश्वविद्यालय, बरेली (उ.प्र.)।

डा. कल्याण सिंह

सहायक प्राध्यापक (उद्यान विज्ञान)/स्वतंत्र लेखक

महात्मा गाँधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय, चित्रकूट (उ.प्र.)।

डा. शिवशंकर पटेल

शोधार्थी (पौध रोग विज्ञान)

बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी (उ.प्र.)।

विषय वस्तु

क्र.सं.	विवरण	पृष्ठ सं.
1	मखाना खेती की प्रमुख समस्याएँ एवं उनके निदान की रणनीतियाँ	4-9
2	गाजर की वैज्ञानिक एवं उन्नत खेती: अधिक उत्पादन, बेहतर गुणवत्ता एवं मूल्य संवर्धन की आधुनिक तकनीक	10-13
3	हरित मखाने का उत्पादन क्रम: एक परिदृश्य	14-15
4	चना की फसल में लगने वाले कीट व उनका प्रबन्धन	16-18
5	लाल भिंडी की वैज्ञानिक खेती: पोषण, स्वास्थ्य एवं किसानों की आय बढ़ाने वाली संभावनाशील फसल	19-22
6	परंपरागत मखाने का महत्व एवं उपयोग	23-25
7	काला नमक चावल : पारंपरिक एवं पोषक तत्व से भरपूर	26-28





मखाना खेती की प्रमुख समस्याएँ एवं उनके निदान की रणनीतियाँ

डा० सुनील कुमार मंडल

सहायक प्राध्यापक

क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, झंझारपुर (डा० राजेन्द्र प्रसाद केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय, पूसा, समस्तीपुर, बिहार)

मखाना एक प्रमुख जलीय फसल है, जिसका सामाजिक, आर्थिक एवं पोषण संबंधी दृष्टि से विशेष महत्त्व है। बिहार को मखाना उत्पादन का प्रमुख केंद्र माना जाता है। राज्य के मिथिलांचल क्षेत्र, विशेषकर मधुबनी, दरभंगा, पूर्णिया, कटिहार, सहरसा एवं आसपास के जिलों में मखाने की खेती व्यापक रूप से की जाती है। पारंपरिक रूप से इसकी खेती तालाबों, झीलों, चौर क्षेत्रों तथा अन्य स्थिर जल निकायों में की जाती रही है। हाल के वर्षों में वैज्ञानिक तकनीकों के विकास से मखाने की खेती को खेत आधारित प्रणाली में भी अपनाया जा रहा है।

मखाना की खेती ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार सृजन, किसानों की आय में वृद्धि तथा स्थानीय कृषि अर्थव्यवस्था को मजबूत बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। इसके बीजों से प्राप्त लावा (फॉक्स नट पॉप्स) का उपयोग खाद्य पदार्थों के रूप में किया जाता है। मखाना अपने पोषण संबंधी गुणों और बढ़ती बाजार माँग के कारण किसानों के लिए एक महत्वपूर्ण व्यावसायिक फसल बनता जा रहा है।

इसके बावजूद, मखाना उत्पादकों को अनेक तकनीकी, आर्थिक, श्रम संबंधी एवं विपणन संबंधी समस्याओं का सामना करना पड़ता है। परंपरागत उत्पादन प्रणाली, खेतों एवं तालाबों में काम करने की कठिन परिस्थितियाँ, कटाई तथा बीज प्रसंस्करण में श्रम की अधिक आवश्यकता, उन्नत तकनीकों का सीमित प्रसार और बाजार में उचित

मूल्य की अनिश्चितता इसकी उत्पादकता तथा लाभप्रदता को प्रभावित करते हैं।

अतः मखाना उत्पादन को टिकाऊ, लाभकारी और प्रतिस्पर्धी बनाने के लिए इन समस्याओं की पहचान करना तथा उनके व्यावहारिक एवं वैज्ञानिक समाधान विकसित करना आवश्यक है।

मखाना की खेती की प्रमुख समस्याएँ

श्रम-प्रधान एवं थकाऊ उत्पादन प्रक्रिया

मखाना की खेती की सबसे प्रमुख समस्याओं में इसकी श्रम-प्रधान उत्पादन प्रक्रिया शामिल है। पारंपरिक तालाब आधारित खेती में पौधों की देखभाल, खरपतवार नियंत्रण, परिपक्व फलों का संग्रहण तथा बीजों को पानी से निकालने जैसे कार्यों में अत्यधिक श्रम की आवश्यकता होती है। कई परिस्थितियों में किसानों और खेतिहर मजदूरों को लंबे समय तक पानी में रहकर काम करना पड़ता है।

मखाना के फल प्रायः काँटेदार होते हैं, जिसके कारण उनकी कटाई और संग्रहण के दौरान चोट लगने की आशंका रहती है। तालाबों की गहराई, कीचड़, पानी की गुणवत्ता तथा कार्यस्थल की कठिन परिस्थितियाँ श्रमिकों की कार्यक्षमता को प्रभावित करती हैं। इस प्रकार कटाई एवं संग्रहण में अधिक समय और श्रम लगता है, जिससे उत्पादन लागत बढ़ जाती है।



इसके अतिरिक्त, कटाई के समय पर्याप्त श्रमिकों की उपलब्धता सुनिश्चित करना भी कठिन हो सकता है। ग्रामीण क्षेत्रों में मजदूरी दरों में वृद्धि तथा श्रमिकों की कमी से छोटे एवं सीमांत किसानों की उत्पादन लागत पर अतिरिक्त दबाव पड़ता है।

निदान

मखाना की कटाई एवं संग्रहण के लिए उपयुक्त उपकरणों का विकास, श्रम-बचत तकनीकों का उपयोग, सुरक्षित कार्य-पद्धतियों को अपनाना तथा किसानों और मजदूरों को व्यावहारिक प्रशिक्षण देना आवश्यक है। स्थानीय परिस्थितियों के अनुकूल अर्द्ध-यांत्रिक उपकरण विकसित किए जाने चाहिए, ताकि श्रम की आवश्यकता कम हो और कार्य की सुरक्षा बढ़े।

आधुनिक मशीनीकरण का अभाव

मखाना उत्पादन के विभिन्न चरणों में अभी भी पारंपरिक विधियों का व्यापक उपयोग किया जाता है। विशेष रूप से फल संग्रहण, बीज निष्कर्षण, बीजों की सफाई, सुखाने, भंडारण तथा प्रसंस्करण में मानवीय श्रम पर अधिक निर्भरता रहती है। इसके कारण उत्पादन प्रक्रिया धीमी हो जाती है और प्रति इकाई उत्पादन लागत बढ़ जाती है।

मखाना के बीजों से लावा तैयार करने की प्रक्रिया भी तकनीकी दृष्टि से विशेष कौशल की मांग करती है। पारंपरिक प्रसंस्करण में तापमान, नमी और दबाव का उचित नियंत्रण नहीं होने पर लावा की गुणवत्ता तथा आकार प्रभावित हो सकते हैं। परिणामस्वरूप उत्पाद का बाजार मूल्य कम हो सकता है।

इसके अतिरिक्त, छोटे किसानों के लिए महंगी मशीनें खरीदना कठिन होता है। स्थानीय स्तर पर उपयुक्त मशीनों की उपलब्धता, मरम्मत तथा तकनीकी सहायता की कमी भी मशीनीकरण के प्रसार में बाधा उत्पन्न करती है।

निदान

मखाना की कटाई, बीज निष्कर्षण, सफाई, सुखाने, ग्रेडिंग तथा लावा निर्माण के लिए उपयुक्त मशीनों का विकास और प्रसार किया जाना चाहिए। किसान उत्पादक संगठनों, सहकारी समितियों तथा स्वयं सहायता समूहों के माध्यम से साझा मशीन केंद्र स्थापित किए जा सकते हैं। इससे छोटे किसानों को कम लागत पर आधुनिक उपकरणों का लाभ मिलेगा।

पूँजी, भूमि एवं जल निकायों तक पहुँच की समस्या

मखाना की पारंपरिक खेती के लिए उपयुक्त तालाबों, झीलों तथा जलमग्न क्षेत्रों की आवश्यकता होती है। अनेक छोटे एवं सीमांत किसानों के पास स्वयं के तालाब या पर्याप्त जल क्षेत्र उपलब्ध नहीं होते।

ऐसे किसान प्रायः पट्टे अथवा लीज पर लिए गए तालाबों में खेती करते हैं।

पट्टे की ऊँची लागत, सीमित अवधि के लिए भूमि या तालाब का अधिकार तथा स्वामित्व संबंधी अनिश्चितता किसानों के दीर्घकालीन निवेश को प्रभावित करती है। तालाब की सफाई, जल प्रबंधन, मेड़ की मरम्मत तथा अन्य आवश्यक सुधारों पर निवेश करने में किसान संकोच कर सकते हैं, विशेषकर तब जब उन्हें भविष्य में उस तालाब पर खेती करने का भरोसा न हो।

इसके अतिरिक्त, उन्नत बीज, श्रम, उपकरण, परिवहन तथा प्रसंस्करण के लिए आवश्यक पूँजी की कमी भी उत्पादन विस्तार में बाधा बनती है। औपचारिक ऋण तथा उपयुक्त वित्तीय सहायता तक सीमित पहुँच के कारण कई किसान आधुनिक तकनीकों को अपनाने में असमर्थ रहते हैं।

निदान

किसानों को संस्थागत ऋण, उपयुक्त वित्तीय सहायता तथा कृषि विकास योजनाओं की जानकारी उपलब्ध कराई जानी चाहिए। तालाबों के पट्टे की शर्तों को पारदर्शी और यथासंभव दीर्घकालीन बनाया जाना चाहिए। किसान उत्पादक संगठनों एवं सहकारी समितियों के माध्यम से सामूहिक निवेश, साझा उपकरणों और विपणन सुविधाओं को प्रोत्साहित करना चाहिए।

उन्नत बीज एवं वैज्ञानिक तकनीकी जानकारी का अभाव

मखाना की उत्पादकता बढ़ाने के लिए गुणवत्तापूर्ण बीज तथा उपयुक्त उत्पादन तकनीकों का महत्वपूर्ण योगदान है। फिर भी अनेक किसानों को उन्नत किस्मों के प्रमाणित बीज, बीज चयन, बीज उपचार, पौध स्थापना, पोषण प्रबंधन और जल प्रबंधन से संबंधित वैज्ञानिक जानकारी पर्याप्त रूप से उपलब्ध नहीं हो पाती।

पारंपरिक बीजों का लगातार उपयोग करने से फसल की उत्पादकता और गुणवत्ता में अपेक्षित सुधार नहीं हो पाता। इसके अलावा, किसानों में उन्नत किस्मों की विशेषताओं, उनकी अनुकूलता तथा उपयुक्त उत्पादन परिस्थितियों के संबंध में जानकारी की कमी हो सकती है।

मखाना की खेती में तालाब आधारित और खेत आधारित उत्पादन प्रणालियों की आवश्यकताएँ अलग-अलग हो सकती हैं। इसलिए सभी क्षेत्रों में एक ही उत्पादन तकनीक अपनाना उपयुक्त नहीं है। स्थानीय जलवायु, मिट्टी, जल की उपलब्धता और उत्पादन प्रणाली के अनुरूप तकनीकों का चयन आवश्यक है।



निदान

कृषि विश्वविद्यालयों, कृषि विज्ञान केंद्रों तथा अनुसंधान संस्थानों द्वारा विकसित उन्नत किस्मों एवं प्रमाणित बीजों की उपलब्धता सुनिश्चित की जानी चाहिए। किसानों को प्रशिक्षण, प्रदर्शन, किसान गोष्ठियों और खेत-स्तरीय परीक्षणों के माध्यम से वैज्ञानिक उत्पादन तकनीकों की जानकारी दी जानी चाहिए। उन्नत किस्मों का चयन संबंधित क्षेत्र की परिस्थितियों और अनुसंधान संस्थानों की अनुशंसाओं के आधार पर किया जाना चाहिए।

कीट, रोग एवं खरपतवार की समस्या

मखाना की फसल में कीटों, रोगों तथा खरपतवारों का प्रकोप उत्पादन एवं गुणवत्ता को प्रभावित कर सकता है। खरपतवार पौधों के साथ पोषक तत्वों, प्रकाश और स्थान के लिए प्रतिस्पर्धा करते हैं। प्रारंभिक अवस्था में इनका अधिक प्रकोप होने पर पौधों की वृद्धि तथा फसल स्थापना प्रभावित हो सकती है।

इसी प्रकार, कीटों एवं रोगजनकों का प्रकोप पौधों की पत्तियों, तनों, फलों अथवा बीजों को नुकसान पहुँचा सकता है। जलमग्न परिस्थितियों में फसल की नियमित निगरानी करना कई बार कठिन होता है। परिणामस्वरूप समस्या की पहचान देर से होने पर नियंत्रण की लागत बढ़ सकती है और उपज में कमी आ सकती है।

अनुचित कीटनाशक या अन्य कृषि रसायनों का उपयोग जलीय पर्यावरण, लाभकारी जीवों तथा मानव स्वास्थ्य के लिए भी जोखिम उत्पन्न कर सकता है। इसलिए मखाना की खेती में फसल सुरक्षा के लिए वैज्ञानिक एवं पर्यावरण-अनुकूल दृष्टिकोण अपनाना आवश्यक है।

निदान

समेकित कीट एवं रोग प्रबंधन (IPM) को अपनाया जाना चाहिए। इसके अंतर्गत नियमित निगरानी, समय पर खरपतवार नियंत्रण, प्रभावित पौधों की पहचान, स्वच्छ उत्पादन पद्धतियों तथा आवश्यकता के अनुसार अनुशंसित नियंत्रण उपायों का उपयोग किया जा सकता है। किसी भी कृषि रसायन का प्रयोग केवल संबंधित फसल एवं जलीय परिस्थितियों के लिए वैध अनुशंसा, निर्धारित मात्रा और सुरक्षा निर्देशों के अनुसार किया जाना चाहिए।

जलवायु परिवर्तन एवं जल प्रबंधन संबंधी चुनौतियाँ

मखाना की खेती जल की उपलब्धता और स्थानीय पर्यावरणीय परिस्थितियों पर निर्भर करती है। अनियमित वर्षा, अत्यधिक वर्षा, बाढ़, लंबे समय तक जलभराव, सूखा तथा तापमान में असामान्य परिवर्तन इसकी उत्पादन प्रक्रिया को प्रभावित कर सकते हैं।

अत्यधिक जलस्तर या बाढ़ की स्थिति में फसल प्रबंधन, फल संग्रहण और श्रमिकों की सुरक्षा कठिन हो सकती है। दूसरी ओर, पर्याप्त जल उपलब्ध नहीं होने पर पौधों की वृद्धि तथा फसल विकास प्रभावित हो सकता है। जल की गुणवत्ता में गिरावट और जल निकायों में गाद जमा होने से भी उत्पादन संबंधी कठिनाइयाँ उत्पन्न हो सकती हैं।

जलवायु परिवर्तन के प्रभाव क्षेत्र, वर्ष और उत्पादन प्रणाली के अनुसार अलग-अलग हो सकते हैं। इसलिए दीर्घकालीन उत्पादकता बनाए रखने के लिए स्थानीय परिस्थितियों के अनुरूप जल प्रबंधन तथा जलवायु-अनुकूल उत्पादन तकनीकों का विकास आवश्यक है।

निदान

जल निकायों की नियमित देखभाल, उचित जलस्तर प्रबंधन, आवश्यकतानुसार जल निकासी एवं जल संचयन की व्यवस्था तथा स्थानीय परिस्थितियों के अनुरूप उत्पादन तकनीकों को अपनाना चाहिए। किसानों को मौसम संबंधी पूर्वानुमान और कृषि परामर्श उपलब्ध कराए जाने चाहिए। जलवायु जोखिम को कम करने के लिए क्षेत्र-विशिष्ट अनुसंधान और प्रदर्शन कार्यक्रमों को बढ़ावा देना आवश्यक है।

विपणन, मूल्य निर्धारण एवं प्रसंस्करण की समस्याएँ

मखाना उत्पादकों के सामने विपणन एक महत्वपूर्ण चुनौती है। कई किसान अपनी उपज स्थानीय व्यापारियों या बिचौलियों के माध्यम से बेचते हैं। बाजार की जानकारी, उत्पाद की गुणवत्ता के आधार पर मूल्य निर्धारण, भंडारण और परिवहन की सीमित सुविधाओं के कारण उन्हें अपनी उपज का अपेक्षित मूल्य प्राप्त करने में कठिनाई हो सकती है।

मखाना की बिक्री में बीजों की गुणवत्ता, आकार, नमी, प्रसंस्करण की विधि तथा लावा की गुणवत्ता का महत्व होता है। यदि किसानों के पास उचित सफाई, ग्रेडिंग, सुखाने और भंडारण की सुविधाएँ उपलब्ध नहीं हैं, तो उपज की गुणवत्ता प्रभावित हो सकती है। इसके अतिरिक्त, कच्चे माल और प्रसंस्कृत उत्पादों के मूल्य में अंतर का पर्याप्त लाभ किसानों तक नहीं पहुँच पाता।

बाजार में कीमतों के उतार-चढ़ाव तथा खरीदारों तक सीधी पहुँच की कमी से किसानों की आय में अनिश्चितता बनी रहती है। इस कारण उत्पादन बढ़ने के बावजूद किसानों की वास्तविक आय में अपेक्षित वृद्धि नहीं हो पाती।

निदान

किसान उत्पादक संगठनों, सहकारी समितियों और सामूहिक विपणन व्यवस्थाओं को बढ़ावा देना चाहिए। उत्पादों की सफाई, ग्रेडिंग, पैकेजिंग, भंडारण और प्रसंस्करण के लिए स्थानीय स्तर पर सुविधाएँ विकसित की जानी चाहिए। डिजिटल बाजार सूचना, प्रत्यक्ष विपणन,



ब्रांडिंग और गुणवत्तापूर्ण पैकेजिंग के माध्यम से किसानों को बेहतर बाजारों से जोड़ा जा सकता है।

श्रमिकों के स्वास्थ्य एवं सुरक्षा संबंधी समस्याएँ

मखाना की कटाई और संग्रहण के दौरान श्रमिकों को लंबे समय तक पानी तथा कीचड़ में काम करना पड़ सकता है। इससे त्वचा संबंधी परेशानियों, चोट लगने, फिसलने, अत्यधिक शारीरिक थकान तथा जलजनित संक्रमणों के संपर्क में आने का जोखिम बढ़ सकता है। काँटेदार फलों के कारण हाथों और पैरों में चोट लगने की आशंका भी रहती है।

सुरक्षा उपकरणों की कमी, प्राथमिक उपचार की सीमित उपलब्धता तथा कठिन कार्य परिस्थितियाँ इन जोखिमों को और बढ़ा सकती हैं। श्रमिकों के स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ने से कार्यक्षमता में कमी तथा उपचार पर अतिरिक्त खर्च भी हो सकता है।

निदान

श्रमिकों को उपयुक्त सुरक्षा उपकरण, जैसे मजबूत दस्ताने, पैरों की सुरक्षा के साधन तथा आवश्यकतानुसार सुरक्षात्मक वस्त्र उपलब्ध कराए जाने चाहिए। कार्यस्थल पर प्राथमिक उपचार की व्यवस्था, सुरक्षित कार्य-पद्धतियों का प्रशिक्षण और स्वच्छता संबंधी सावधानियाँ अपनाना आवश्यक है। जहाँ संभव हो, ऐसे उपकरणों का उपयोग किया जाना चाहिए जिनसे लंबे समय तक पानी में रहकर काम करने की आवश्यकता कम हो।

अनुसंधान, विस्तार सेवाओं एवं संस्थागत सहयोग की कमी

मखाना की खेती की विशिष्ट आवश्यकताओं को देखते हुए निरंतर अनुसंधान और प्रभावी कृषि विस्तार सेवाओं की आवश्यकता है। उत्पादन तकनीकों, प्रसंस्करण, जल प्रबंधन, कीट एवं रोग नियंत्रण तथा जलवायु परिवर्तन के प्रभावों से संबंधित जानकारी किसानों तक समय पर पहुँचनी चाहिए।

यदि अनुसंधान संस्थानों द्वारा विकसित तकनीकों का किसानों के खेतों तक पर्याप्त प्रसार नहीं हो पाता, तो वैज्ञानिक उपलब्धियों का लाभ सीमित रह जाता है। इसी प्रकार, कृषि विभाग, अनुसंधान संस्थानों, वित्तीय संस्थाओं, प्रसंस्करण इकाइयों और बाजार के बीच समन्वय की कमी से उत्पादन प्रणाली के विकास में बाधाएँ उत्पन्न होती हैं।

निदान

अनुसंधान संस्थानों, कृषि विज्ञान केंद्रों, राज्य कृषि विभाग और किसान संगठनों के बीच समन्वय बढ़ाया जाना चाहिए। किसान प्रशिक्षण, प्रदर्शन इकाइयों, क्षेत्र-विशिष्ट तकनीकी साहित्य तथा नियमित कृषि परामर्श के माध्यम से वैज्ञानिक जानकारी का प्रसार किया जाना

चाहिए। किसानों की वास्तविक समस्याओं पर आधारित सहभागी अनुसंधान को भी प्रोत्साहित करना आवश्यक है।

मखाना की खेती में सुधार के लिए प्रमुख रणनीतियाँ

आधुनिक एवं श्रम-बचत तकनीकों का विकास

मखाना की खेती में उत्पादन लागत कम करने के लिए ऐसे उपकरणों और तकनीकों का विकास आवश्यक है, जो स्थानीय परिस्थितियों में आसानी से उपयोग किए जा सकें। कटाई, फल संग्रहण, बीज निष्कर्षण, सफाई और प्रसंस्करण के विभिन्न चरणों में उपयुक्त मशीनीकरण अपनाने से समय और श्रम की बचत हो सकती है।

हालाँकि, मशीनों का चयन करते समय तालाबों की गहराई, पौधों की संरचना, जल निकायों की स्थिति तथा किसानों की आर्थिक क्षमता को ध्यान में रखना चाहिए। छोटे किसानों के लिए कम लागत वाले तथा साझा उपयोग के उपकरण अधिक उपयोगी हो सकते हैं।

उन्नत किस्मों एवं गुणवत्तापूर्ण बीजों का उपयोग

मखाना की उत्पादकता और गुणवत्ता में सुधार के लिए क्षेत्र के अनुकूल उन्नत किस्मों तथा प्रमाणित बीजों का उपयोग किया जाना चाहिए। किस्मों का चयन करते समय उपज क्षमता, बीज की गुणवत्ता, फसल अवधि, स्थानीय पर्यावरण के प्रति अनुकूलता तथा प्रसंस्करण संबंधी विशेषताओं पर विचार करना चाहिए।

'स्वर्ण वैदेही' जैसी किस्मों अथवा अन्य उन्नत किस्मों को अपनाने से पहले संबंधित अनुसंधान संस्थान की नवीनतम अनुशंसाओं तथा स्थानीय क्षेत्र में उनकी उपयुक्तता की पुष्टि करनी चाहिए। किसानों को बीज की गुणवत्ता और वैज्ञानिक उत्पादन पद्धतियों के बारे में प्रशिक्षण देना भी आवश्यक है।

खेत आधारित वैज्ञानिक उत्पादन प्रणाली को प्रोत्साहन

मखाना की पारंपरिक तालाब आधारित खेती के अतिरिक्त वैज्ञानिक अनुसंधान द्वारा विकसित खेत आधारित उत्पादन प्रणाली भी कई क्षेत्रों में उपयोगी विकल्प बन सकती है। इस प्रणाली में उपयुक्त खेत का चयन, मिट्टी की तैयारी, बीज की बुआई, पौधों की स्थापना, जल प्रबंधन और समय पर कृषि कार्यों का विशेष महत्व होता है।

खेत आधारित प्रणाली से उन किसानों को लाभ मिल सकता है जिनके पास उपयुक्त कृषि भूमि तो है, लेकिन तालाब उपलब्ध नहीं है। हालाँकि, इस प्रणाली की सफलता भूमि की प्रकृति, जल उपलब्धता, स्थानीय जलवायु और अनुशंसित उत्पादन तकनीक पर निर्भर करती है।

मखाना के साथ अन्य फसलों को शामिल करने अथवा एक वर्ष में दो उत्पादन चक्र अपनाने का निर्णय स्थानीय कृषि-जलवायु



परिस्थितियों और वैज्ञानिक अनुशंसाओं के आधार पर ही किया जाना चाहिए। प्रत्येक क्षेत्र में दो फसलों से उत्पादन प्राप्त होना सुनिश्चित नहीं है।

मखाना के साथ मत्स्य पालन का एकीकरण

उपयुक्त तालाबों में मखाना की खेती के साथ मत्स्य पालन को एकीकृत करने से उपलब्ध जल संसाधनों का बेहतर उपयोग किया जा सकता है और किसानों के लिए आय के अतिरिक्त स्रोत विकसित हो सकते हैं।

हालाँकि, मखाना एवं मछली की संयुक्त खेती की सफलता के लिए तालाब की गहराई, जल की गुणवत्ता, मछलियों की प्रजाति, मखाना पौधों की वृद्धि तथा दोनों घटकों की पोषण संबंधी आवश्यकताओं का ध्यान रखना आवश्यक है। मत्स्य पालन में प्रयुक्त आहार, उर्वरक या अन्य पदार्थों का उपयोग इस प्रकार किया जाना चाहिए कि मखाना की फसल और जलीय पर्यावरण पर प्रतिकूल प्रभाव न पड़े।

इस प्रणाली को अपनाने से पहले स्थानीय परिस्थितियों के अनुरूप वैज्ञानिक सलाह और आर्थिक व्यवहार्यता का आकलन करना चाहिए।

किसान समूहों एवं सहकारी संस्थाओं को प्रोत्साहन

छोटे और सीमांत किसानों के लिए आधुनिक उपकरणों, प्रसंस्करण सुविधाओं और बाजार तक सीधी पहुँच प्राप्त करना कठिन होता है। किसान उत्पादक संगठन, सहकारी समितियाँ तथा स्वयं सहायता समूह सामूहिक खरीद, साझा मशीन उपयोग, प्रशिक्षण, प्रसंस्करण और विपणन में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं।

सामूहिक प्रयासों से किसानों की सौदेबाजी क्षमता बढ़ सकती है, लागत में कमी आ सकती है और उत्पादों की गुणवत्ता में एकरूपता लाई जा सकती है। साथ ही, संस्थागत ऋण, तकनीकी सहायता और सरकारी योजनाओं का लाभ प्राप्त करना भी आसान हो सकता है।

मूल्य संवर्धन एवं उद्यमिता का विकास

मखाना के केवल कच्चे बीज या प्राथमिक रूप से प्रसंस्कृत उत्पाद बेचने के बजाय मूल्य संवर्धित उत्पादों का विकास किसानों की आय बढ़ाने में सहायक हो सकता है। मखाना लावा की ग्रेडिंग, आकर्षक पैकेजिंग, गुणवत्ता नियंत्रण, स्वच्छ प्रसंस्करण तथा विभिन्न खाद्य उत्पादों के निर्माण से बाजार के नए अवसर विकसित किए जा सकते हैं।

ग्रामीण क्षेत्रों में छोटे प्रसंस्करण केंद्रों, महिला स्वयं सहायता समूहों तथा कृषि आधारित सूक्ष्म उद्यमों को प्रोत्साहित करके स्थानीय स्तर पर रोजगार के अवसर बढ़ाए जा सकते हैं। उत्पादों की गुणवत्ता, खाद्य सुरक्षा मानकों, उपयुक्त पैकेजिंग और बाजार की माँग के अनुरूप उद्यम विकसित करना आवश्यक है।

जलवायु-अनुकूल एवं टिकाऊ उत्पादन प्रणाली

मखाना की खेती को दीर्घकालीन रूप से लाभकारी बनाए रखने के लिए जल संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग, जल निकासों की देखभाल तथा पर्यावरण-अनुकूल कृषि पद्धतियाँ अपनानी चाहिए। अत्यधिक रासायनिक पदार्थों के उपयोग से बचना, फसल की नियमित निगरानी करना और आवश्यकतानुसार वैज्ञानिक प्रबंधन उपाय अपनाना उत्पादन प्रणाली की स्थिरता में योगदान दे सकता है।

जलवायु संबंधी जोखिमों को कम करने के लिए मौसम पूर्वानुमान, स्थानीय कृषि सलाह, उपयुक्त जल प्रबंधन तथा क्षेत्र-विशिष्ट उत्पादन तकनीकों का प्रसार आवश्यक है।

किसानों की आय बढ़ाने के लिए समन्वित कार्य योजना

मखाना उत्पादन की समस्याओं का समाधान केवल एक तकनीक या योजना से संभव नहीं है। इसके लिए उत्पादन, प्रसंस्करण, विपणन, वित्तीय सहायता और कृषि विस्तार सेवाओं को एक साथ मजबूत करना आवश्यक है। प्रमुख प्राथमिकताएँ निम्नलिखित होनी चाहिए:

- 1. उत्पादन स्तर पर:** उन्नत किस्मों, गुणवत्तापूर्ण बीजों तथा क्षेत्र-विशिष्ट वैज्ञानिक तकनीकों का प्रसार।
- 2. श्रम एवं लागत प्रबंधन:** कटाई, संग्रहण और प्रसंस्करण में उपयुक्त श्रम-बचत उपकरणों का उपयोग।
- 3. जल प्रबंधन:** तालाबों एवं खेतों में जल की उपलब्धता और गुणवत्ता का उचित प्रबंधन।
- 4. फसल सुरक्षा:** कीट, रोग और खरपतवार की समय पर पहचान तथा समेकित प्रबंधन।
- 5. वित्तीय सहायता:** छोटे एवं सीमांत किसानों को संस्थागत ऋण और तकनीकी निवेश के अवसर उपलब्ध कराना।
- 6. प्रसंस्करण एवं मूल्य संवर्धन:** स्थानीय स्तर पर सफाई, ग्रेडिंग, सुखाने, पैकेजिंग और प्रसंस्करण की सुविधाओं का विकास।
- 7. विपणन:** किसान उत्पादक संगठनों और सामूहिक विपणन के माध्यम से किसानों को बेहतर बाजारों से जोड़ना।
- 8. प्रशिक्षण एवं अनुसंधान:** कृषि विश्वविद्यालयों, अनुसंधान केंद्रों तथा कृषि विज्ञान केंद्रों के माध्यम से किसानों को निरंतर तकनीकी सहायता प्रदान करना।

इन उपायों को लागू करते समय प्रत्येक क्षेत्र की स्थानीय परिस्थितियों, किसानों की आर्थिक क्षमता और उपलब्ध संसाधनों का ध्यान रखना आवश्यक है।



निष्कर्ष

मखाना बिहार की एक महत्वपूर्ण जलीय कृषि फसल है, जिसमें किसानों की आय बढ़ाने, ग्रामीण रोजगार सृजित करने तथा कृषि आधारित उद्यमों के विकास की पर्याप्त संभावनाएँ हैं। इसके बावजूद श्रम-प्रधान उत्पादन प्रक्रिया, आधुनिक मशीनीकरण की कमी, पूँजी एवं जल निकायों तक सीमित पहुँच, गुणवत्तापूर्ण बीजों की उपलब्धता, वैज्ञानिक तकनीकी जानकारी का अभाव, कीट एवं रोग प्रबंधन, जलवायु परिवर्तन और विपणन संबंधी कठिनाइयाँ इसकी उत्पादकता तथा लाभप्रदता को प्रभावित करती हैं।

इन समस्याओं के समाधान के लिए आधुनिक एवं श्रम-बचत तकनीकों का विकास, उन्नत किस्मों का क्षेत्रानुकूल उपयोग, वैज्ञानिक जल प्रबंधन, समेकित कीट एवं रोग प्रबंधन, किसान समूहों का

सशक्तीकरण तथा प्रसंस्करण और विपणन सुविधाओं का विस्तार आवश्यक है। इसके साथ ही, कृषि अनुसंधान संस्थानों, सरकारी विभागों, वित्तीय संस्थाओं और किसानों के बीच प्रभावी समन्वय स्थापित करना भी महत्वपूर्ण है।

यदि मखाना की खेती में वैज्ञानिक तकनीकों, स्थानीय अनुभव और संस्थागत सहयोग का समन्वित उपयोग किया जाए, तो उत्पादन लागत में कमी, उत्पाद की गुणवत्ता में सुधार और किसानों की बाजार तक पहुँच में वृद्धि संभव है। इससे मखाना उत्पादन प्रणाली अधिक टिकाऊ एवं लाभकारी बन सकती है और बिहार के किसानों की आय तथा ग्रामीण अर्थव्यवस्था को मजबूत करने में योगदान दे सकती है।





गाजर की वैज्ञानिक एवं उन्नत खेती: अधिक उत्पादन, बेहतर गुणवत्ता एवं मूल्य संवर्धन की आधुनिक तकनीक

आकाश कुमार- शोध छात्र, सब्जी विज्ञान विभाग, यथार्थ मिश्रा- शोध छात्र, आनुवंशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग
आशीष कुमार सिंह- सहायक प्राध्यापक, सब्जी विज्ञान विभाग, गोविन्द मौर्य- कनिष्ठ अनुसंधान सहायक-I सब्जी विज्ञान विभाग
आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या

गाजर *डॉक्स कैरोटा* एल. एक महत्वपूर्ण जड़ वाली सब्जी फसल है, जिसकी खेती विश्व के अनेक समशीतोष्ण एवं उपोष्ण क्षेत्रों में की जाती है। यह एपिएसी (अम्बेलीफेरी) कुल की फसल है। गाजर की मुख्य खाद्य उपज उसकी परिवर्तित प्राथमिक जड़ है, जिसमें कार्बोहाइड्रेट, आहार रेशा, कैरोटेनॉयड, विटामिन एवं विभिन्न खनिज तत्व पर्याप्त मात्रा में पाए जाते हैं। विशेष रूप से नारंगी रंग की गाजर में β -कैरोटीन (प्रो-विटामिन A) की मात्रा अधिक होती है, गाजर की जड़ें कैरोटीनॉयड से भरपूर होती हैं। साथ ही 100 ग्राम गाजर की जड़ में लगभग 8,285 μg β -कैरोटीन, 320 mg पोटैशियम तथा 2.8 ग्राम आहार्य रेशा पाया जाता है। काली गाजर एंथोसायनिन का समृद्ध स्रोत है और इसका उपयोग कांजी नामक पेय बनाने में किया जाता है, जिसे एक अच्छा भूखवर्धक माना जाता है। भारत में गाजर की खेती मुख्यतः ठंडे एवं अनुकूल मौसम वाले क्षेत्रों में की जाती है। उत्तर प्रदेश, हरियाणा, पंजाब, राजस्थान, मध्य प्रदेश तथा अन्य राज्यों में इसकी व्यावसायिक खेती होती है। गाजर की मांग ताजी सब्जी के साथ-साथ जूस, अचार, मुरब्बा, हलवा, कैंडी, पाउडर तथा अन्य प्रसंस्कृत उत्पादों के रूप में भी बढ़ रही है। इसलिए वैज्ञानिक उत्पादन तकनीकों के साथ कटाई-पश्चात प्रबंधन एवं मूल्य संवर्धन अपनाकर किसान इस फसल से अधिक लाभ प्राप्त कर सकते हैं।

गाजर का वानस्पतिक एवं कृषि परिचय

गाजर की उत्पत्ति के संबंध में मध्य एशिया एवं आसपास के क्षेत्रों को महत्वपूर्ण माना जाता है। वर्तमान में इसकी विभिन्न रंगों एवं

आकारों वाली अनेक किस्में विश्व भर में उगाई जाती हैं। गाजर द्विवर्षीय पौधा है, लेकिन व्यावसायिक उत्पादन में इसकी जड़ को सामान्यतः प्रथम वर्ष में ही प्राप्त कर लिया जाता है। प्रथम वर्ष में पौधा पत्तियों का गुच्छा तथा भंडारणयुक्त जड़ विकसित करता है। यदि पौधे को खेत में छोड़ दिया जाए तो दूसरे वर्ष में पुष्पक्रम एवं बीज विकसित होते हैं। गाजर का तना सीधा तथा शाखायुक्त होता है, जिसकी ऊँचाई 30-120 सेमी तक होती है। यह एक मोटी, मांसल मुख्य जड़ से निकलता है, जिसकी लंबाई 5-30 सेमी होती है। जड़ में बाहरी कोर तथा आंतरिक कोर पाए जाते हैं।

उपयुक्त जलवायु

गाजर एक शीत ऋतु की फसल है, हालांकि इसकी कुछ उष्णकटिबंधीय किस्में काफी अधिक तापमान को सहन कर सकती हैं। जड़ की वृद्धि, उपज और गुणवत्ता के लिए लगभग 10-25°C तापमान उपयुक्त माना जाता है। नारंगी रंग वाली गाजर की जड़ों में कैरोटीन का सर्वोत्तम संचय 15.6-21.1°C तापमान पर होता है। जड़ के अच्छे विकास, आकर्षक रंग एवं बेहतर गुणवत्ता के लिए मध्यम एवं अपेक्षाकृत ठंडा तापमान उपयुक्त रहता है। अत्यधिक तापमान की स्थिति में जड़ का विकास, रंग, स्वाद एवं बनावट प्रभावित हो सकते हैं। तथा कम से मध्यम तापमान में गाजर की जड़ों में कैरोटेनॉयड का विकास अच्छा होता है। दूसरी ओर, अत्यधिक गर्म परिस्थितियों में जड़ छोटी, कम रंग वाली अथवा अधिक रेशदार हो सकती है। इसलिए क्षेत्र की जलवायु के



अनुसार सही बुवाई समय एवं उपयुक्त किस्म का चयन अत्यंत महत्वपूर्ण है।

भूमि एवं मृदा की तैयारी

गाजर की अच्छी उपज के लिए गहरी, भुरभुरी, उपजाऊ एवं अच्छी जल-निकास वाली बलुई दोमट या दोमट मिट्टी सबसे उपयुक्त मानी जाती है। भारी, चिकनी तथा जलभराव वाली मिट्टी में जड़ का विकास बाधित होता है और जड़ों में शाखाएं, विकृतियां तथा फटने की समस्या बढ़ सकती है। मृदा का pH सामान्यतः हल्का अम्लीय से उदासीन अथवा हल्का क्षारीय सीमा में उपयुक्त रहता है। खेत में जल निकास की उचित व्यवस्था आवश्यक है। गाजर की जड़ सीधे नीचे की ओर विकसित होती है, इसलिए खेत की गहरी जुताई करके मिट्टी को पर्याप्त गहराई तक भुरभुरा बनाना चाहिए। खेत में कंकड़, पत्थर, कठोर परत एवं बड़े मिट्टी के ढेले नहीं होने चाहिए। ये जड़ की सीधी वृद्धि में बाधा डालकर दोमुंही या शाखा युक्त जड़ें उत्पन्न कर सकते हैं। इसलिए खेत को 2-3 बार जोतकर एवं पाटा लगाकर खेत को समतल एवं भुरभुरा किया जाता है। उठी हुई क्यारियां अथवा रिज एवं फरो विधि से बुवाई करना उपयोगी होता है। तथा कतारों में बुवाई करने से निराई-गुड़ाई, सिंचाई एवं पौध संरक्षण कार्य आसान होते हैं। बीज की समान गहराई एवं समान वितरण के लिए प्रिंसीजन सीड ड्रिल जैसी तकनीकों का प्रयोग किया जा सकता है।

उन्नत किस्में एवं संकर

1. **काशी अरुण-** यह उष्णकटिबंधीय गाजर की एक उन्नत किस्म है, जिसकी जड़ें आकर्षक लाल रंग की, 21-23 सेमी लंबी तथा 110-125 ग्राम वजन की होती हैं। इसमें कुल घुलनशील ठोस 8.5-9.0° ब्रिक्स तथा 90% से अधिक स्व-रंजित कोर पाया जाता है। यह लगभग 90-100 दिनों में तैयार होती है तथा 300-350 क्विंटल/हेक्टेयर तक उपज दे सकती है। पोषणीय दृष्टि से यह लाइकोपीन 7.25-7.50 mg/100 g ताजा भार एवं β -कैरोटीन 3.5-3.7 mg/100 g ताजा भार का अच्छा स्रोत है।
2. **काशी कृष्ण-** यह गाजर की एक उन्नत काली/बैंगनी रंग वाली किस्म है। यह लगभग 95-105 दिनों में तैयार हो जाती है। इसकी जड़ों में एंथोसाइनिन 275-300 mg/100 g ताजा भार की उच्च मात्रा पाई जाती है। इसकी औसत उपज लगभग 200-220 क्विंटल/हेक्टेयर है तथा इसकी अनुशांसा उत्तर प्रदेश के लिए की गई है।
3. **पूसा केसर-** पूसा केसर की जड़ें स्कार्लेट लाल रंग की होती हैं तथा कोर भी पर्याप्त रूप से लाल होता है, जबकि स्थानीय

उष्णकटिबंधीय किस्मों में कोर प्रायः पीला या सफेद होता है। इसमें कैरोटीन की मात्रा लगभग 38 mg/100 g खाद्य भाग पाई जाती है। यह मैदानी क्षेत्रों में अच्छी तरह बीज बनाती है। इसकी बुवाई सितंबर के प्रारंभ से नवंबर के प्रारंभ तक की जा सकती है तथा बुवाई के लगभग 80-90 दिनों में जड़ें तैयार हो जाती हैं।

4. **पूसा मेघाली-** पूसा मेघाली की जड़ें लंबी, नारंगी रंग की तथा क्रमशः पतली होती हैं और इनमें स्व-रंजित कोर पाया जाता है। इसकी जड़ों में कैरोटीन की मात्रा लगभग 11,571 IU/100 g होती है। यह किस्म मैदानी क्षेत्रों में बीज उत्पादन करने में सक्षम है।

सिंचाई, खाद एवं अंतः सांस्कृतिक क्रियाएँ

बीजों को पर्याप्त नमी प्राप्त होने तथा अंकुरण में सहायता के लिए बुवाई से पहले एक सिंचाई करनी चाहिए। गाजर को बार-बार सिंचाई की आवश्यकता होती है। इसलिए सप्ताह में एक बार सिंचाई करना अधिक उपयुक्त पाया गया है। नियमित अंतराल पर सिंचाई करने से मुख्य जड़ की वृद्धि को बढ़ावा मिलता है तथा द्वितीयक जड़ों के विकास को रोका जा सकता है। प्रारंभिक अवस्था में खरपतवार नियंत्रण विशेष रूप से महत्वपूर्ण है। इसलिए कतारों के बीच हल्की निराई-गुड़ाई तथा आवश्यकतानुसार हाथ से खरपतवार निकालना प्रभावी उपाय हैं। मल्लिचंग से खरपतवार नियंत्रण के साथ-साथ मिट्टी की नमी एवं तापमान को नियंत्रित करने में सहायता मिल सकती है। खरपतवारों के प्रभावी नियंत्रण के लिए अंकुरण-पूर्व अवस्था में प्रोपाजीन 1.12 किग्रा या अमीबेन 2.24-4.48 किग्रा प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग किया जा सकता है।

अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए गाजर की फसल को पर्याप्त मात्रा में पोषक तत्व उपलब्ध कराना आवश्यक है। खेत की तैयारी के समय 20-30 टन अच्छी तरह सड़ी हुई गोबर की खाद प्रति हेक्टेयर डालनी चाहिए। फसल के लिए लगभग 40-50 किग्रा नत्रजन (N), 40-50 किग्रा फास्फोरस (P) तथा 80-100 किग्रा पोटैशियम (K) प्रति हेक्टेयर की आवश्यकता होती है। नत्रजन की आधी मात्रा तथा फास्फोरस और पोटैशियम की पूरी मात्रा बुवाई के समय आधार खाद के रूप में देनी चाहिए। नत्रजन की शेष आधी मात्रा पहली गुड़ाई के समय, अर्थात् बुवाई के 30-35 दिन बाद, देनी चाहिए। नत्रजन की अधिक मात्रा देने से गाजर की जड़ों की गुणवत्ता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। इससे शर्करा, शुष्क पदार्थ, कैरोटीन तथा विटामिन C की मात्रा में उल्लेखनीय कमी हो सकती है। इसके साथ ही, जड़ों की भंडारण क्षमता भी प्रभावित होती है। जैव उर्वरकों, कम्पोस्ट तथा लाभकारी सूक्ष्मजीवों का उचित उपयोग मृदा स्वास्थ्य सुधारने में सहायक हो सकता है। एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन



के माध्यम से जैविक एवं रासायनिक स्रोतों का संतुलित उपयोग अधिक टिकाऊ उत्पादन प्रदान करता है।

कीट एवं रोग प्रबंधन

गाजर में कीट एवं रोगों का प्रकोप जलवायु, मृदा, नमी एवं फसल प्रबंधन पर निर्भर करता है। प्रमुख कीटों में एफिड, मृदा कीट तथा जड़ को क्षति पहुँचाने वाले कीट शामिल हैं, जो पौधों की वृद्धि एवं जड़ों की गुणवत्ता को प्रभावित कर सकते हैं। प्रमुख रोगों में डैम्पिंग-ऑफ, पत्ती झुलसा तथा जड़ सड़न महत्वपूर्ण हैं। अधिक नमी एवं खराब जल निकास से इन रोगों का प्रकोप बढ़ सकता है।

प्रबंधन हेतु स्वस्थ एवं प्रमाणित बीज, उचित बीजोपचार, संतुलित पोषण, नियंत्रित सिंचाई, अच्छी जल निकासी, खेत की स्वच्छता एवं फसल चक्र अपनाना चाहिए। कीट एवं रोगों की नियमित निगरानी आवश्यक है। आवश्यकता पड़ने पर जैविक नियंत्रण तथा स्थानीय रूप से अनुमोदित कीटनाशी एवं कवकनाशी का प्रयोग विशेषज्ञ की सलाह एवं लेबल निर्देशों के अनुसार करना चाहिए। इस प्रकार एकीकृत कीट एवं रोग प्रबंधन (IPM) द्वारा उपज एवं गुणवत्ता को सुरक्षित रखा जा सकता है।

आधुनिक, टिकाऊ एवं गुणवत्तापूर्ण उत्पादन तकनीक

आधुनिक गाजर उत्पादन में पारंपरिक खेती के साथ वैज्ञानिक, डिजिटल एवं टिकाऊ तकनीकों का समावेश किया जा रहा है। उठी हुई क्यारियों, मल्टिचिंग, ड्रिप सिंचाई तथा फर्टिगेशन के उपयोग से जल एवं पोषक तत्वों का दक्ष उपयोग होता है और उत्पादन लागत कम की जा सकती है। सेंसर आधारित मृदा नमी निगरानी द्वारा फसल की वास्तविक आवश्यकता के अनुसार सिंचाई करने से जल की बचत तथा जड़ों की समान वृद्धि सुनिश्चित होती है। मौसम आधारित कृषि सलाह से सिंचाई, रोग-कीट प्रबंधन एवं कटाई का बेहतर नियोजन संभव है। प्रिंसीजन फार्मिंग में GPS, सेंसर, ड्रोन, डिजिटल कृषि सलाह तथा डेटा आधारित निर्णयों का उपयोग किया जाता है। छोटे एवं सीमांत किसान सामूहिक स्तर पर इन तकनीकों को अपनाकर लागत कम कर सकते हैं।

गाजर की बाजार गुणवत्ता मुख्यतः जड़ के आकार, रंग, चिकनाई, समानता, स्वाद, मिठास तथा पोषणीय गुणों पर निर्भर करती है। गुणवत्तापूर्ण उत्पादन के लिए उपयुक्त किस्म का चयन, सही तापमान पर बुवाई, भुरभुरी एवं गहरी मिट्टी, संतुलित पोषण तथा नियमित सिंचाई आवश्यक है। मिट्टी में कंकड़ या कठोर परत होने से जड़ें शाखायुक्त एवं विकृत हो सकती हैं। β -कैरोटीन एवं अन्य कैरोटेनॉयड का संचय किस्म और पर्यावरण से प्रभावित होता है। अतः स्थानीय परिस्थितियों के अनुकूल उच्च रंग एवं पोषण गुणवत्ता वाली किस्मों का चयन तथा

अत्यधिक नाइट्रोजन, अनियमित सिंचाई एवं तापमान की प्रतिकूलता से बचाव आवश्यक है।

कटाई एवं उपज

गाजर की खेती में उचित परिपक्वता अवस्था पर कटाई करना अत्यंत महत्वपूर्ण है। यदि समय पर कटाई नहीं की जाए तो जड़ें उपभोग के लिए अनुपयुक्त हो सकती हैं। कटाई में देरी होने पर जड़ें अधिक कठोर हो जाती हैं तथा उनमें फटने की समस्या उत्पन्न हो सकती है। गाजर की जड़ें तब बाजार योग्य अवस्था में मानी जाती हैं, जब ऊपरी सिरे पर उनका व्यास लगभग 2-4 सेमी हो जाए। कटाई से पहले हल्की सिंचाई करने से मिट्टी नरम हो जाती है, जिससे जड़ों को आसानी से तथा बिना क्षति के उखाड़ने में सुविधा होती है। गाजर की उपज मुख्यतः मौसम एवं किस्म पर निर्भर करती है और सामान्यतः लगभग 20-25 टन प्रति हेक्टेयर तक प्राप्त की जा सकती है।

गाजर में मूल्य संवर्धन एवं प्रसंस्करण

गाजर का मूल्य संवर्धन किसानों की आय बढ़ाने तथा कटाई के बाद होने वाली हानि को कम करने का प्रभावी माध्यम है। ताजी गाजर के विपणन के साथ-साथ इसे विभिन्न प्रसंस्कृत उत्पादों में परिवर्तित करके अधिक आर्थिक लाभ प्राप्त किया जा सकता है। गाजर से जूस, अचार, मुरब्बा, हलवा, कैंडी, प्यूरी, पाउडर तथा डिहाइड्रेटेड गाजर जैसे अनेक मूल्य संवर्धित उत्पाद तैयार किए जा सकते हैं। इसके अतिरिक्त रेडी-टू-कुक एवं रेडी-टू-ईट उत्पादों की मांग भी तेजी से बढ़ रही है। निर्जलीकरण द्वारा गाजर की नमी कम करके उसकी भंडारण अवधि बढ़ाई जा सकती है, जबकि गाजर पाउडर का उपयोग सूप, बेकरी उत्पाद, इंस्टेंट खाद्य पदार्थ तथा विभिन्न प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थों में किया जाता है।

प्रसंस्करण के लिए स्वस्थ, ताजी एवं समान आकार की जड़ों का चयन करना आवश्यक है। साथ ही, उत्पाद की गुणवत्ता बनाए रखने के लिए उचित धुलाई, स्वच्छ प्रसंस्करण, नियंत्रित तापमान, सुरक्षित पैकेजिंग एवं उचित भंडारण पर विशेष ध्यान देना चाहिए। खाद्य सुरक्षा एवं स्वच्छता मानकों का पालन करके गुणवत्तापूर्ण उत्पाद तैयार किए जा सकते हैं, जिससे किसानों को बेहतर बाजार मूल्य, रोजगार के अवसर तथा अतिरिक्त आय प्राप्त हो सकती है।

आर्थिक महत्व एवं किसानों की आय

गाजर कम अवधि में आय देने वाली महत्वपूर्ण सब्जी फसल है। इसकी आर्थिक सफलता उत्पादन लागत, उपज, बाजार मूल्य, गुणवत्ता एवं विपणन व्यवस्था पर निर्भर करती है। उच्च गुणवत्ता वाली गाजर को स्थानीय मंडी, खुदरा बाजार, सुपरमार्केट तथा प्रत्यक्ष उपभोक्ता बाजार में बेचकर बेहतर मूल्य प्राप्त किया जा सकता है। FPO के माध्यम



से किसान बीज एवं उर्वरक की सामूहिक खरीद तथा ग्रेडिंग, पैकेजिंग एवं विपणन कर बेहतर सौदेबाजी कर सकते हैं। मूल्य संवर्धन द्वारा अतिरिक्त आय प्राप्त की जा सकती है और छोटी या असमान आकार की स्वस्थ जड़ों को प्रसंस्करण में उपयोग करके अपशिष्ट कम किया जा सकता है।

जलवायु-स्मार्ट एवं भविष्य की खेती

जलवायु परिवर्तन के कारण बढ़ता तापमान, अनिश्चित वर्षा एवं जल उपलब्धता में परिवर्तन सब्जी उत्पादन को प्रभावित कर रहे हैं। गाजर ठंडे मौसम की फसल होने के कारण तापमान के प्रति विशेष संवेदनशील है। जलवायु-स्मार्ट खेती में स्थानीय परिस्थितियों के अनुकूल किस्मों का चयन, समय पर बुवाई, मल्लिचंग, सूक्ष्म सिंचाई तथा मृदा में जैविक पदार्थ की वृद्धि महत्वपूर्ण उपाय हैं।

ड्रिप सिंचाई से जल का दक्ष उपयोग होता है, जबकि सेंसर एवं मौसम आधारित सलाह से अनावश्यक सिंचाई को कम किया जा सकता है। भविष्य में डिजिटल कृषि, रिमोट सेंसिंग, ड्रोन, सेंसर, कृत्रिम बुद्धिमत्ता तथा डेटा आधारित फसल प्रबंधन गाजर उत्पादन को अधिक सटीक, टिकाऊ एवं संसाधन-कुशल बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएंगे।

निष्कर्ष

गाजर एक महत्वपूर्ण, पौष्टिक एवं आर्थिक दृष्टि से उपयोगी जड़ वाली सब्जी फसल है, जिसकी उत्पादन क्षमता एवं गुणवत्ता में वृद्धि वैज्ञानिक खेती की तकनीकों को अपनाकर की जा सकती है। उपयुक्त किस्म एवं जलवायु का चयन, भुरभुरी एवं उपजाऊ मिट्टी, संतुलित पोषण, उचित सिंचाई तथा प्रभावी कीट एवं रोग प्रबंधन गुणवत्तापूर्ण उत्पादन के प्रमुख आधार हैं। इसके साथ ड्रिप सिंचाई, मल्लिचंग, फर्टिगेशन, सेंसर आधारित निगरानी एवं प्रिसीजन फार्मिंग जैसी आधुनिक तकनीकों को अपनाने से जल, पोषक तत्व एवं अन्य संसाधनों का दक्ष उपयोग संभव है। उचित परिपक्वता अवस्था पर कटाई, वैज्ञानिक भंडारण तथा प्रसंस्करण द्वारा कटाई-पश्चात हानि को कम किया जा सकता है। जूस, अचार, मुरब्बा, हलवा, कैन्डी, प्यूरी एवं पाउडर जैसे मूल्य संवर्धित उत्पाद किसानों की आय बढ़ाने में सहायक हैं। जलवायु परिवर्तन की चुनौतियों को देखते हुए जलवायु-स्मार्ट एवं डिजिटल कृषि तकनीकों का समन्वित उपयोग गाजर उत्पादन को अधिक टिकाऊ, लाभकारी, गुणवत्तापूर्ण एवं संसाधन-कुशल बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगा।





हरित मखाने का उत्पादन क्रम: एक परिदृश्य

डा० सुनील कुमार मंडल

सहायक प्राध्यापक

क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, झंझारपुर, डा० राजेन्द्र प्रसाद केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय, पूसा, समस्तीपुर, बिहार

मखाना (फाक्स नट) भारत के बिहार में व्यापक रूप से उगाया जाता है। पोषक तत्वों से भरपूर यह खाद्य उत्पाद निम्फेसी परिवार का पौधा है जिसमें तैरते हुए पत्तियां होते हैं और यह एक जलीय पौधा है। फूल मखाना (फाॅक्स नट) की विशेषता यह है कि इसे भारत के कई राज्यों और दुनिया के अन्य हिस्सों में भी बड़े पैमाने पर जैविक रूप से उगाया जाता है। यह एक जैविक खाद्य पदार्थ है जिसके संवर्धन और कटाई में प्रायः उर्वरकों या कीटनाशकों के उपयोग की आवश्यकता नहीं होती है।

प्रथम चरण: मखाने की खेती

मखाने की खेती दो प्रणालियों में की जाती है:

पारम्परिक तालाब प्रणाली

इस व्यावसायिक फसल के खेती की प्रक्रिया में सबसे पहले तालाब के साफ करना, फिर बीजों को समान रूप से बिखेरना, अतिरिक्त पौधों को छांटना और खाली जगह भरना, कटाई करना और अंत में बीजों को एकत्रित करना शामिल है। यह ध्यान देने योग्य है कि जिन पुराने तालाबों में पुनः खेती की जा रही है, तो उनमें बीजों को बिखेरने की आवश्यकता नहीं होती, बचे हुए बीजों से पौधे स्वतः ही उग जाते हैं।

आधुनिक खेत प्रणाली

इस प्रणाली में, चयनित कृषि भूमि क्षेत्र या खेत में पौधों की उचित पोषण (उर्वरक) देकर पहले से अच्छी तरह तैयार किया जाता है। नाइट्रोजन, फास्फोरस और पोटेशियम का अनुपात क्रमशः 100: 60: 40 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर होता है।

इसके बाद, खेती योग्य खेतों की दो से तीन बार गहरी जुताई की जाती है। तत्पश्चात् खेत को 1.5 फीट की ऊँचाई तक पानी से भर दिया जाता है और प्रत्येक साल दिसम्बर के महीने के आसपास बीज बोये जाते हैं।

यह महत्वपूर्ण है कि स्वस्थ बीजों को बिखेर कर बोया जाय और वे पूरी भूमि या नर्सरी में समान रूप से फैल जाए। किसानों को यह भी सुनिश्चित करना चाहिए कि नर्सरी में पौधों के विकास की पूरी अवधि (यानी दिसम्बर से जनवरी तक) के दौरान 1.5 फीट की अधिकतम जलस्तर बनाए रखा जाए।

तीन से चार महीने की परिपक्वता अवधि के बाद, अप्रैल के पहले दो हफ्तों में नर्सरी से तैयार पौधों को मुख्य खेत में स्थानांतरित कर दिया जाता है और उन्हें 1.20 × 1.25 मीटर की सुझाई गई दूरी पर रोपण किया जाता है। इससे पौधा की उचित वृद्धि व विकास और पोषण सुनिश्चित होता है।

मखाना की खेती करना आसान है और इसमें न्यूनतम पूंजी निवेश की आवश्यकता होती है। इसका कारण यह है कि पिछले फसल के बचे हुए बीजों से नए पौधे अंकुरित होते हैं। अतिरिक्त पौधों को छाटने, कम घनी जगहों पर बीज बोने, आवश्यकता पड़ने पर कीटनाशक का उपयोग और अंत में कटाई प्रक्रिया के दौरान तालाब से बिखरे हुए बीज एकत्रित करने में खर्च होता है।

द्वितीय चरण: मखाना की कटाई

तालाब और खेत प्रणाली में, अनुभवी मछुआरे व श्रमिकों के द्वारा तल से डुबे हुए बीजों का ढेर बनाते हैं, जिन्हें सींग के आकार के



बांस की सहायता से फली तल से निकाला जाता है। छोटे आकार और हल्के बीजों को एकत्रित करने के लिए छोटे जालों का भी उपयोग किया जाता है।

बीजों के इन एकत्रित ढेरों को फिर पैरों से कुचला जाता है, ताकि उन पर मौजूद झिल्लीदार आवरण को हटाया जा सके। मखाना उगाने की खेत प्रणाली में प्रति हेक्टेयर उपज अधिक होती है और कटाई का चक्र भी छोटा होता है। परन्तु तालाब प्रणाली में प्रति हेक्टेयर उपज अपेक्षाकृत कम होती है और कटाई का चक्र भी अधिक होता है।

तृतीय चरण: मखाना प्रसंस्करण

मखाना प्रसंस्करण एक बेहद रोचक और श्रमसाध्य प्रक्रिया है। इस प्रक्रिया में काफी मेहनत लगती है और सही गुणवत्ता वाले फूले हुए मखाने प्राप्त करने के लिए विशेष कौशल की आवश्यकता होती है। ज्यादातर मखाना पारंपरिक तरीकों से ही संसाधित किया जाता है, जिसका कारण अच्छी प्रसंस्करण तकनीकी की अनुपलब्धता है। परन्तु आज कल मखाना का प्रसंस्करण के लिए व्यावसायिक पैमाने पर प्रसंस्करण मशीन का व्यवहार किया जा रहा है।

मखाना के बीजों को सुखाना: शुरूआत में बीजों को सुबह के समय कुछ घंटों के लिए सीधी धूप में सुखाया जाता है, ताकि उनमें नमी की मात्रा कम होकर लगभग 31 प्रतिशत तक पहुँच जाय। साथ ही, बीजों की ताजगी बनाए रखने और उनमें नमी की अधिकतम मात्रा सुनिश्चित करने के लिए उन पर पानी भी छिड़का जाता है।

मखाना बीज का टेम्परिंग (तड़का लगाना): बीजों को पहले से गर्म किया जाता है और तड़का लगाया जाता है। यह प्रक्रिया चालीस से बहत्तर घंटे तक चलती है। यह प्रक्रिया बीज के कठोर आवरण (करनेल) से दाना को ढीला करना तथा बीज में उपस्थित नमी के संतुलन को बनाये रखने के लिये किया जाता है।

मखाना का वर्गीकरण: वर्गीकरण प्रक्रिया के दौरान, बीजों को विभिन्न आकारों की विशेष छलनी से गुजारा जाता है और एक समान गुणवत्ता और आकार सुनिश्चित करने के लिए उन्हें अलग-अलग श्रेणियों में रखा जाता है।

मखाना भूनना और फूटना: मखाना के बीजों की एक समान आकार का बनाने के लिए उनमें एकसमान उष्मा का स्थानांतरण किया जाता है। इन छोटे गये बीजों के विशेष लोहे के तबे में उचित तापमान (लगभग 250 डिग्री सेंटीग्रेड) पर लगातार हिलाते हुए एक मुट्ठी भर बीज निकालकर उन्हें किसी सख्त सतह पर रखकर लकड़ी के हथौड़े से मारकर परीक्षण किया जाता है। दवाब के कारण बीज का छिलका टूट जाता है

और फूला हुआ दाना (बीज) बाहर निकल आता है। अंत में बीज का छिलका हाथ से निकाल दिया जाता है।

निरंतर अनुसंधान, सरकारी सहयोग और मखाना बाजार में नए उद्यमियों के प्रवेश के साथ प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में काफी प्रगति हुई है।

मखाना पापिंग की प्रक्रिया अब मशीनीकृत हो गई है और इसमें निम्न उल्लेखित प्रक्रियायें शामिल हैं:

- ✓ बीजों की कटाई
- ✓ बीजों की सफाई
- ✓ बीजों का वर्गीकरण
- ✓ बीजों को सुखाना
- ✓ बीजों को भूनना
- ✓ मखाने के दानों (बीजों) का लावा बनाना

इस पद्धति को आई.सी.ए.आर. सेन्ट्रल इंस्टीच्यूट आफ पोस्ट-हार्बेस्ट इंजीनियरिंग एण्ड टेक्नोलॉजी (सी.आई.पी.एच.ई.टी.), लुधियाना, पंजाब में विकसित किया गया है। इसे बड़े पैमाने पर लागू करने योग्य बनाया गया है और अंततः इसका व्यावसायीकरण भी किया गया है। आज इस आधुनिक पद्धति का विकास होने से मखाना उत्पादकों को काफी लाभ मिल रहा है और किसान मखाना उत्पादन के प्रति भी अधिक उत्साहित हो रहे हैं।

मशीनीकृत पापिंग प्रक्रिया से हजारों किसानों और उनके परिवारों को अनेक लाभ प्राप्त हुए हैं, क्योंकि इससे इन्हें कठिन परिस्थितियों से मुक्ति मिली है और उनके काम करने की स्थिति में भी सुधार हुआ है। इसके अतिरिक्त, मखाना पापिंग प्रक्रिया के मशीनीकरण से एक व्यवस्थित विधि विकसित हुई है जो उच्च और सुसंगत गुणवत्ता वाले मखाने को सुनिश्चित करती है और घरेलू खपत के साथ-साथ अंतर्राष्ट्रीय बाजारों में निर्यात के लिए उपयुक्त है।

निष्कर्ष

मखाने की खेती किसानों के लिए एक अत्यधिक लाभकारी और आय बढ़ाने वाली नकदी जलीय फसल है। यह कृषि आधारित ग्रामीण अर्थव्यवस्था को मजबूत करने का एक बेहतरीन विकल्प है।

मखाने का न सिर्फ घरेलू बाजार बल्कि अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भी अपार निर्यात का अवसर है। उन्नत किस्मों (स्वर्ण वैदेही और सवौर मखाना-1) और मखाने से जुड़े विभिन्न उत्पादों (मखाना फ्लेक्स, खीर आदि) के निर्माण से इसके भविष्य को और अधिक उज्ज्वल बनाया जा सकता है।





चना की फसल में लगने वाले कीट व उनका प्रबन्धन

अकाशदीप सिंह, डा० प्रदीप कुमार, डा० अभिषेक कुमार चौधरी, डा० सौरभ सिंह, शिवानी

कीट विज्ञान विभाग

कृषि विज्ञान संस्थान, बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय झांसी (उत्तर प्रदेश)

दलहनी फसलों का भारतीय कृषि प्रणाली में महत्वपूर्ण हिस्सा है। चना दलहनी फसलों का राजा कहलाता है। जिसमें प्रोटीन 15 प्रतिशत व कार्बोहाइड्रेट 40-10 प्रतिशत पाया जाता है।

चना की खेती सम्पूर्ण विश्व में की जाती है। तथा विश्व में सबसे ज्यादा चने की खेती भारत में की जाती है। तथा भारत में सबसे ज्यादा चने की खेती मध्य प्रदेश व राजस्थान राज्य में की जाती है। इसके अलावा उत्तर प्रदेश, गुजरात, हरियाणा आदि राज्य में चने की खेती की जाती है। चना भारत की प्रमुख दलहनी फसल है।

चना की फसल को भारत में रबी ऋतु में बोया जाता है। और इस फसल को अधिक सर्दी वाली जलवायु में बोया जा सकता है। यह फसल कम पानी की दशा में उगाया जा सकती है। इसके लिए ढेले वाली मिट्टी उपयुक्त रहती है। लेकिन इसकी गुणवत्ता को कीट बहुत प्रभावित करते हैं। चना पोटीन का अच्छा स्रोत होने के कारण रोगों के प्रति बहुत संवेदनशील है। चना की फसल के बहुत कीट हैं।

चने का फली छेदक कीट

चने की फसल का महत्वपूर्ण कीट चने का फली छेदक कीट है। जिसे अंग्रेजी में gram pod borer कहते हैं।

वयस्क कीट की पहचान

इस कीट के लार्वा शुरू में छोटे लगभग 105 मिली मीटर लम्बे होते हैं। जो बढ़ते हुए 30-35 मिलीमीटर तक लम्बे हो जाते होते हैं। यह हल्के पीले रंग के होते हैं। जिनकी उपरी सतह पर तीन धारीया पायी जाती

है व व्यस्क 30-35 मिलीमीटर लम्बा होता है। इनका सिर छोटा आंखें काली होती है। और 2 जोड़ी पंख पाये जाते हैं। व अगली जोड़ी पंखों तथा इस कीट नर व मादा की पहचान हेड क्षृंगिका जैसे की मादा में धागाकार व नर में दिकधांकार होती है।

नुकसान की प्रकृति

यह कीट पूरे वर्ष सक्रिय रहता है। तथा ज्यादा क्षति फरवरी-मार्च में करते हैं। इस कीट की लार्वा अवस्था ज्यादा हानिकारक होती है। इनमें काटने व चबाने वाले मुखंाग पाये जाते हैं। जब इस कीट की लार्वा छोटी अवस्था में होती है। पौधों के कोमल भागों व पत्तियों को खाती है। फूल व फल बनते समय इसका ज्यादा आक्रमण होता है। लार्वा फली में छेद कर फली को अन्दर से खाती जाती है। तथा लार्वा फली के आधा बहार व आधा अन्दर लटका रहता है। जिसके कारण 20-25 प्रतिशत उपज में हानि होती है।

नियंत्रण के उपाय

कृषि विधियाँ

- ✓ समय पर बुआई करने और जल्दी पकने वाली किस्मों का उगाने से कीट के प्रकोप से बचा जा सकता है।
- ✓ खेत में खरपतवार व फसल अवशेषों को नियंत्रित रखें।
- ✓ प्रतिरोधी किस्मों का चयन करें। विजय, राज-202



- ✓ चना के प्रमुख कीट हेतु खेत की गहरी जुताई करने पर व्यस्क कीट के प्यूपा जाते हैं।
- ✓ फसल चक्र का उपयोग करना चाहिए।

यांत्रिक विधियाँ

एक हेक्टेयर क्षेत्र में 50-60 बर्ड पर्चर लगाने चाहिए जिस पर बैठकर पक्षी सुडियो को खा सके।

जैविक नियंत्रण

- ✓ नीम की निम्बोली के सत का 5 प्रतिशत घोल बनाकर छिड़काव करें।
- ✓ एनपीवी 250 एलई + टीनोपाल 1 प्रतिशत करे इसके घोल में 0.5 प्रतिशत गुड और 0.01 प्रतिशत तरल साबुन का घोल डालने से कीटों के आकर्षण व पत्तियों पर चिपकने में मदद करती है।
- ✓ अण्डा परजीवी ट्राइकोग्रामा 50,000 - 100000 प्रति हेक्टेयर उपयोग करना।

रसायनिक नियंत्रण

मोनोक्रोटोफास 36 एस एल 1 ली प्रति हेक्टेयर व कार्बोरिल 10 प्रतिशत धूल @ 20 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर उपयोग करना चाहिए।

चने का कटुआ कीट

व्यस्क कीट की पहचान

इस कीट का लार्वा स्लेटी रंग का व 2 मिली मीटर लम्बा होता है। व पूर्ण विकसित लार्वा 40-45 मिली मीटर लम्बा होता है। इस कीट का व्यस्क भूरे रंग का 20-26 मिलीमीटर लम्बा व पंख विस्तार के साथ 40-50 मिलीमीटर लम्बा होता है। इसकी चोड़ाई 7 मिलीमीटर होती है। इनमें 2 जोड़ी पंख पाये जाते हैं। अगली जोड़ी पंखों में भूरे रंग के धब्बे पाये जाते हैं। पीछे वाले पंख सफेद रंग के होते हैं। नर व मादा की पहचान हेतु मादा में धागाकार व ना दिक्धांकार क्षृणिकां पायी जाती हैं।

क्षति की प्रकृति

यह कीट नवम्बर-अप्रैल तक नुकसान करता है। इस कीट की लार्वा अवस्था सबसे ज्यादा हानिकारक अवस्था होती है। इस कीट में काटने व चबाने वाले मुखांग पाये जाते हैं। यह कीट पौधों विभिन्न भागों; फूल पत्तियां फल-द्व को काटकर जमीन पर गिरा देते हैं। छोटी अवस्था में लार्वा जमीन के पास से पौधों को काट देता है जिसमें पूरा पौधा सूख जाता है। इसका आक्रमण रात को ज्यादा होता है। क्योंकि लार्वा दिन में मिट्टी के टेलो व कूड़े करकट में छिपे रहते हैं। इसमें फसल में 20-50 प्रतिशत तक हानि होती है।

नियंत्रण के उपाय

कृषि विधियाँ

- ✓ समय पर बुआई करने ओर जल्दी पकने वाली किस्मों का उगाने से कीट के प्रकोप से बचा जा सकता है।
- ✓ खेत में खरपतवार व फसल अवशेषों को नियंत्रित रखें।
- ✓ प्रतिरोधी किस्मों का चयन करें। केजीडी -2020 एनबीजी -857
- ✓ चना के प्रमुख कीट हेतु खेत की गहरी जुताई करने पर व्यस्क कीट के प्यूपा जाते हैं।
- ✓ फसल चक्र का उपयोग करना चाहिए।
- ✓ ये रात्रिचर कीट होते हैं। लाईट ट्रेप का उपयोग करते हैं।

यांत्रिक नियंत्रण

एक हेक्टेयर क्षेत्र में 50-60 बर्ड पर्चर लगाने चाहिए जिस पर बैठकर पक्षी सुडियो को खा सके।

जैविक नियंत्रण

लार्वा परजीवी ब्राऊन स्पीपीज 50,000 - 100000 का उपयोग करना चाहिए।

रसायनिक नियंत्रण

क्लोरोपायारीफास 20 ई सी @ 1.5 ली प्रति हेक्टेयर व मोनो क्रोटोफास - 40 ईसी @ 1.5 ली प्रति हेक्टेयर उपयोग करना चाहिए।

चने का अर्दकुण्डलीकार कीट (सेमी लूपर)

वयस्क कीट की पहचान

इस कीट के लार्वा की सबसे बड़ी यह पहचान है कि यह पीठ पर कूबड़ बनाकर उठाकर चलता है। इसी कारण इसे सेमीलूपर कहा जाता है।

इस कीट का लार्वा हरे रंग का होता है। शरीर पर धारीया पायी जाती है। पूर्ण विकसित लार्वा की लम्बाई 2.5 सेंटीमीटर होती है इनके पंखों पर सफेद रंग के धब्बे पाये जाते हैं। इस कीट पंखों पर T आकार के निशान पाये जाते हैं।

क्षति की प्रकृति

इस कीट के लार्वा अवस्था सबसे ज्यादा हानिकारक अवस्था होती है। लार्वा पत्तियों के हरे भाग; कलोरो फिल द्व को खुरच कर खा जाती है जिससे पत्तियां जालीदार सफेद दिखने लग जाती है। जब लार्वा पौधों की फलियों को खाती है। तो फलियों में टेडे मेडे और अनियंत्रित बना देती है।



नियंत्रण के उपाय

कृषि विधियां

- ✓ समय पर बुआई करने ओर जल्दी पकने वाली किस्मों का उगाने से कीट के प्रकोप से बचा जा सकता है।
- ✓ खेत में खरपतवार व फसल अवशेषों को नियंत्रित रखे।
- ✓ प्रतिरोधी किस्मों का चयन करे। पूसा-343
- ✓ चना के प्रमुख कीट हेतु खेत की गहरी जुताई करने पर व्यस्क कीट के प्यूपा जाते है।
- ✓ फसल चक्र का उपयोग करना चाहिए।

यांत्रिक विधियां

एक हेक्टेयर क्षेत्र में 50-60 बर्ड पर्चर लगाने चाहिए जिस पर बैठकर पक्षी सुडियो को खा सके।

जैविक नियंत्रण

नीम की निम्बोली के सत का 5 प्रतिशत घोल बनाकर छिड़काव करे।

एनपीवी 250 एलई टीनोपाल 1 प्रतिशत करे इसके घोल में 0.5 प्रतिशत गुड और 0.01 प्रतिशत तरल साबुन का घोल डालने से कीटों के आर्कषण व पत्तियों पर चिपकने में मदद करती है।

बेसिलस ब्यूरिजिएसिस (बीटी) की प्रजाति 1 किलोग्राम को 600 -700 लीटर पानी में घोलकर बनाकर प्रति हेक्टेयर प्रयोग करे।

रसायनिक नियंत्रण

एमामेक्टिन बेंजोएट 0.2 ग्राम प्रति लीटर पानी या स्पिनोसैड 45 ई सी 0.25 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर उपयोग करे। 500-600 एक हेक्टेयर हेतु प्रयाप्त रहता है।





लाल भिंडी की वैज्ञानिक खेती: पोषण, स्वास्थ्य एवं किसानों की आय बढ़ाने वाली संभावनाशील फसल

*धीरज कुमार सरोज, डॉ. गुलाब चंद यादव, डॉ रवि शंकर वर्मा,
राम लखन सोनी, दिनेश कुमार मीणा, प्रदीप कुमार, रमेश खरवार
उद्यानिकी विभाग

बाबा साहेब भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय (BBAU), लखनऊ (उत्तर प्रदेश)

भारतीय भारत विश्व के प्रमुख सब्जी उत्पादक देशों में से एक है। देश में विभिन्न प्रकार की पारंपरिक सब्जियों के साथ-साथ अब रंगीन, पोषणयुक्त एवं विशेष सब्जियों की मांग भी तेजी से बढ़ रही है। आधुनिक उपभोक्ता केवल भोजन की मात्रा पर ध्यान नहीं देता, बल्कि खाद्य पदार्थों की गुणवत्ता, पोषण मूल्य, रंग, स्वाद और स्वास्थ्य लाभ को भी महत्व देता है। यही कारण है कि एंटीऑक्सीडेंट युक्त तथा आकर्षक रंग वाली सब्जियों के प्रति उपभोक्ताओं की रुचि बढ़ रही है।

सामान्यतः बाजारों में हरे रंग की भिंडी उपलब्ध होती है, लेकिन हाल के वर्षों में लाल भिंडी ने एक विशेष एवं आकर्षक सब्जी के रूप में अपनी अलग पहचान बनाई है।

लाल भिंडी के फल लाल से गहरे बैंगनी-लाल रंग के होते हैं। इसका रंग मुख्य रूप से एंथोसायनिन नामक प्राकृतिक वर्णक के कारण होता है। एंथोसायनिन एक महत्वपूर्ण जैव सक्रिय यौगिक है, जो पौधों में लाल, नीले और बैंगनी रंग के निर्माण में योगदान देता है। लाल भिंडी में एंथोसायनिन एवं एंटीऑक्सीडेंट गुणों की उपस्थिति इसे पोषण की दृष्टि से विशेष बनाती है। ICAR के Indian Horticulture में प्रकाशित जानकारी के अनुसार लाल भिंडी, विशेषकर anthocyanin और

antioxidants के संदर्भ में, हरी भिंडी की तुलना में अधिक पोषण महत्व रखती है।

आज के समय में लाल भिंडी केवल एक नवीन सब्जी नहीं बल्कि कृषि विविधीकरण और उच्च मूल्य वाली खेती का एक अच्छा विकल्प बन सकती है। शहरी बाजारों, सुपरमार्केट, होटल उद्योग, जैविक बाजारों तथा स्वास्थ्य के प्रति जागरूक उपभोक्ताओं के बीच इसकी मांग बढ़ने की संभावना है।

लाल भिंडी का पोषण एवं स्वास्थ्य महत्व

वर्तमान समय में पोषण सुरक्षा कृषि का एक महत्वपूर्ण उद्देश्य है। ऐसी फसलों की आवश्यकता है जो केवल उत्पादन ही न दें बल्कि मानव शरीर को आवश्यक पोषक तत्व भी उपलब्ध कराएं। लाल भिंडी इसी दृष्टि से महत्वपूर्ण है।

भिंडी सामान्य रूप से आहार फाइबर, विटामिन, खनिज एवं अन्य पोषक तत्वों का अच्छा स्रोत है। लाल भिंडी में निम्न पोषक तत्व महत्वपूर्ण रूप से पाए जाते हैं:

आहार फाइबर, कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, विटामिन-C, विटामिन A, फोलिक एसिड, कैल्शियम, आयरन, मैग्नीशियम, पोटेशियम।



लाल भिंडी की सबसे प्रमुख विशेषता इसमें उपस्थित एंथोसायनिन है। एंथोसायनिन प्राकृतिक एंटीऑक्सीडेंट गुणों वाला वर्णक है। लाल फल वाली भिंडी की किस्म Kashi Lalima पर किए गए अध्ययन में फल विकास के साथ एंथोसायनिन की मात्रा में परिवर्तन पाया गया तथा उपयुक्त तुड़ाई अवस्था में फलों का रंग और पोषण गुणवत्ता बेहतर पाई गई। इस प्रकार लाल भिंडी को पोषणयुक्त एवं कार्यात्मक खाद्य पदार्थों की श्रेणी में महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त हो सकता है।

लाल भिंडी की प्रमुख किस्में

भारत में लाल फल वाली भिंडी की कुछ किस्में विकसित एवं प्रचलित हैं।

1. पूसा लाल भिंडी-1: यह लाल फल वाली भिंडी की एक महत्वपूर्ण किस्म है। इसे आकर्षक लाल रंग तथा एंथोसायनिन की उपस्थिति के कारण विशेष महत्व प्राप्त है।

2. काशी लालिमा: यह लाल फल वाली भिंडी की एक चर्चित किस्म है। ICAR-IIVR द्वारा विकसित इसके फलों में आकर्षक लाल रंग तथा एंथोसायनिन वर्णक पाया जाता है। वैज्ञानिक अध्ययनों में इसकी रंग गुणवत्ता एवं पोषण विशेषताओं का अध्ययन किया गया है।

जलवायु

लाल भिंडी गर्म मौसम की फसल है। इसकी अच्छी वृद्धि के लिए गर्म एवं आर्द्र जलवायु उपयुक्त होती है।

फसल की वृद्धि के लिए लगभग 25 से 35 डिग्री सेल्सियस तापमान अनुकूल माना जाता है। बीज अंकुरण के लिए पर्याप्त तापमान आवश्यक है। अत्यधिक ठंड तथा पाला पौधों की वृद्धि को प्रभावित कर सकता है। भिंडी को पर्याप्त सूर्य प्रकाश की आवश्यकता होती है। अत्यधिक वर्षा एवं लगातार जलभराव वाली परिस्थितियां पौधों के लिए हानिकारक हो सकती हैं।

उपयुक्त भूमि

लाल भिंडी की खेती विभिन्न प्रकार की मिट्टियों में की जा सकती है, लेकिन अच्छी जल निकास वाली दोमट एवं बलुई दोमट मिट्टी सर्वोत्तम मानी जाती है।

भूमि में निम्न गुण होने चाहिए:

- ✓ अच्छी जल निकासी, पर्याप्त कार्बनिक पदार्थ, भुरभुरी संरचना, उचित उर्वरता, जलभराव से मुक्त स्थिति
- ✓ मिट्टी का pH लगभग 6.0 से 7.5 के बीच उपयुक्त माना जाता है।
- ✓ खेत में पानी रुकने से जड़ों का विकास प्रभावित हो सकता है तथा रोगों का प्रकोप बढ़ सकता है। इसलिए वर्षा ऋतु में जल निकासी की उचित व्यवस्था विशेष रूप से आवश्यक है।

खेत की तैयारी

अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए खेत की तैयारी वैज्ञानिक ढंग से करनी चाहिए। पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से करने के बाद 2 से 3 जुताई कल्टीवेटर या देशी हल से की जाती है। खेत को भुरभुरा एवं खरपतवार मुक्त बनाना आवश्यक है। अंतिम जुताई के समय अच्छी तरह सड़ी हुई गोबर की खाद या कम्पोस्ट मिलाना लाभकारी होता है।

सामान्यतः प्रति हेक्टेयर लगभग 20 टन अच्छी सड़ी हुई गोबर की खाद खेत की तैयारी के समय देने की सिफारिश विभिन्न कृषि पैकेजों में की गई है। जैविक पदार्थ मिट्टी की जल धारण क्षमता, संरचना तथा सूक्ष्मजीव गतिविधियों में सुधार करते हैं।

बुवाई का समय

भारत में लाल भिंडी की खेती मौसम एवं क्षेत्र के अनुसार अलग-अलग समय पर की जा सकती है।

उत्तर भारत में सामान्यतः बुवाई का समय

ग्रीष्मकालीन फसल: फरवरी से मार्च

वर्षा कालीन फसल: जून से जुलाई

कुछ क्षेत्रों में स्थानीय जलवायु के अनुसार अन्य मौसमों में भी इसकी खेती संभव है। बुवाई का समय निर्धारित करते समय तापमान, सिंचाई सुविधा तथा स्थानीय बाजार की मांग का ध्यान रखना चाहिए।

बुवाई की विधि एवं दूरी

लाल भिंडी की बुवाई सामान्यतः सीधी बुवाई द्वारा की जाती है। बीजों को लगभग 2 से 3 सेंटीमीटर गहराई पर बोना चाहिए।

सामान्य दूरी:

ग्रीष्मकालीन फसल: लगभग 45 × 30 सेमी 18-20 kg / ha

वर्षाकालीन फसल: लगभग 60 × 30 सेमी 8-10 kg / ha

उचित दूरी रखने से पौधों को पर्याप्त सूर्य प्रकाश, वायु संचार तथा पोषक तत्व उपलब्ध होते हैं।

पोषक तत्व प्रबंधन

लाल भिंडी की अच्छी वृद्धि एवं उत्पादन के लिए संतुलित पोषक तत्व प्रबंधन आवश्यक है। उर्वरकों का प्रयोग मिट्टी परीक्षण के आधार पर करना सर्वोत्तम होता है। एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन के अंतर्गत निम्न स्रोतों का उपयोग किया जा सकता है जैसे- गोबर की खाद, कम्पोस्ट, वर्मीकम्पोस्ट, जैव उर्वर, रासायनिक उर्वरक आदि।

नत्रजन पौधों की वानस्पतिक वृद्धि में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। फास्फोरस जड़ों की वृद्धि एवं प्रारंभिक विकास में सहायक है, जबकि पोटैश पौधों की मजबूती और गुणवत्ता में योगदान देता है।



सिंचाई प्रबंधन

लाल भिंडी को उचित मात्रा में नमी की आवश्यकता होती है। ग्रीष्मकालीन फसल में मिट्टी की स्थिति और तापमान के आधार पर लगभग 5 से 7 दिन के अंतराल पर सिंचाई की जा सकती है।

महत्वपूर्ण अवस्थाएं:

अंकुरण, पौध वृद्धि, फूल आने की अवस्था, फल बनने की अवस्था आदि अवस्थाओं पर नमी की कमी से उत्पादन प्रभावित हो सकता है। खेत में जलभराव से बचना चाहिए। आधुनिक खेती में ड्रिप सिंचाई प्रणाली का उपयोग करके पानी की बचत और पोषक तत्वों की उपयोग दक्षता बढ़ाई जा सकती है।

खरपतवार प्रबंधन

फसल की प्रारंभिक अवस्था में खरपतवार उत्पादन को गंभीर रूप से प्रभावित कर सकते हैं। खरपतवार पौधों के साथ पानी, पोषक तत्व, प्रकाश एवं स्थान के लिए प्रतिस्पर्धा करते हैं।

खरपतवार नियंत्रण के लिए समय पर निराई-गुड़ाई करें, खेत को प्रारंभिक अवस्था में खरपतवार मुक्त रखें, आवश्यकता अनुसार यांत्रिक नियंत्रण अपनाएं तथा साथ-साथ मल्टिचिंग तकनीक का उपयोग किया जा सकता है।

पहली निराई सामान्यतः बुवाई के लगभग 15 से 20 दिन बाद तथा दूसरी निराई आवश्यकता अनुसार की जा सकती है। धान के पुआल जैसे जैविक मल्ल के उपयोग पर वैज्ञानिक अध्ययनों में नमी संरक्षण एवं खरपतवार प्रबंधन की संभावना भी बताई गई है।

प्रमुख कीट एवं उनका प्रबंधन

तना एवं फल छेदक

भिंडी का प्रमुख कीट तना एवं फल छेदक है। इसकी इल्ली तने एवं कोमल फलों में प्रवेश करके नुकसान पहुंचाती है।

प्रबंधन

- ✓ प्रभावित फलों एवं टहनियों को नियमित रूप से हटाएं।
- ✓ प्रभावित पौध भागों को नष्ट करें।
- ✓ फेरोमोन ट्रैप का उपयोग करें।
- ✓ खेत का नियमित निरीक्षण करें।
- ✓ जैविक नियंत्रण उपायों को प्राथमिकता दें।
- ✓ आवश्यकता होने पर स्थानीय कृषि विश्वविद्यालय या कृषि विभाग की अनुशंसा के अनुसार पौध संरक्षण उपाय अपनाएं।

सफेद मक्खी

सफेद मक्खी पौधों का रस चूसती है तथा पीला शिरा मोजेक जैसे वायरस रोगों के प्रसार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

प्रबंधन

- ✓ पीले चिपचिपे ट्रैप लगाएं।
- ✓ खेत को खरपतवार मुक्त रखें।
- ✓ रोगग्रस्त पौधों को हटाएं।
- ✓ सफेद मक्खी की नियमित निगरानी करें।

पीला शिरा मोजेक रोग

पीला शिरा मोजेक वायरस भिंडी का एक प्रमुख रोग है। इसमें पत्तियों की शिराएं पीली दिखाई देने लगती हैं। रोग बढ़ने पर पूरा पत्ता प्रभावित हो सकता है और पौधों की वृद्धि एवं उत्पादन कम हो सकता है। यह रोग मुख्य रूप से सफेद मक्खी द्वारा फैलता है।

रोग प्रबंधन

- ✓ स्वस्थ एवं प्रमाणित बीजों का उपयोग करें।
- ✓ रोगग्रस्त पौधों को प्रारंभिक अवस्था में निकालें।
- ✓ सफेद मक्खी की निगरानी एवं प्रबंधन करें।
- ✓ खेत को खरपतवार मुक्त रखें।
- ✓ सहनशील किस्मों का चयन करें।
- ✓ समेकित कीट प्रबंधन में रोगरोधी किस्में, जैविक उपाय, ट्रैप तथा आवश्यकता आधारित पौध संरक्षण उपायों का संयुक्त उपयोग अधिक प्रभावी हो सकता है।

फल की तुड़ाई

लाल भिंडी के फलों की तुड़ाई कोमल अवस्था में करनी चाहिए। अत्यधिक परिपक्व होने पर फल रेशेदार एवं कठोर हो जाते हैं। सामान्यतः फल बनने के बाद उपयुक्त कोमल अवस्था में तुड़ाई की जाती है। तुड़ाई के समय ध्यान रखें:

- ✓ फल कोमल अवस्था में तोड़ें।
- ✓ नियमित रूप से 3 से 4 दिन के अंतराल पर तुड़ाई करें।
- ✓ फलों को चोट लगने से बचाएं।
- ✓ सुबह या शाम के समय तुड़ाई करना उपयुक्त हो सकता है।
- ✓ नियमित तुड़ाई से नए फूल एवं फलों का विकास प्रोत्साहित होता है।



उत्पादन एवं उपज

लाल भिंडी की उपज कई कारकों पर निर्भर करती है, जैसे: किस्म, मौसम, पौधों की संख्या, पोषक तत्व प्रबंधन, सिंचाई, कीट एवं रोग प्रबंधन आदि।

सामान्य भिंडी की वैज्ञानिक खेती में विभिन्न कृषि पैकेजों के अनुसार मौसम एवं प्रबंधन के आधार पर लगभग 80 से 150 क्विंटल प्रति हेक्टेयर तक उपज प्राप्त की जा सकती है। लाल भिंडी की वास्तविक उपज किस्म एवं स्थानीय परिस्थितियों के अनुसार भिन्न हो सकती है।

लाल भिंडी की आर्थिक संभावनाएं

आज के समय में कृषि में मूल्यवर्धन और विशेष बाजारों का महत्व बढ़ रहा है। लाल भिंडी इस दिशा में एक महत्वपूर्ण विकल्प हो सकती है।

लाल भिंडी की आर्थिक विशेषताएं:

- आकर्षक रंग के कारण बाजार में विशेष पहचान।
- पोषण एवं स्वास्थ्य के प्रति जागरूक उपभोक्ताओं में मांग।
- सुपरमार्केट एवं शहरी बाजारों में प्रीमियम मूल्य की संभावना।
- जैविक एवं विशेष सब्जी बाजारों में अवसर।
- छोटे किसानों के लिए कृषि विविधीकरण का विकल्प।
- ब्रांडिंग एवं विशेष पैकेजिंग की संभावना।

ICAR-IARI से संबंधित Indian Horticulture लेख में लाल भिंडी को हरी भिंडी की तुलना में अधिक मूल्य प्राप्त करने वाली विशेष फसल के रूप में वर्णित किया गया है।

हालांकि व्यावसायिक स्तर पर खेती शुरू करने से पहले किसानों को स्थानीय बाजार की मांग, बीज की उपलब्धता, उत्पादन लागत और विपणन व्यवस्था का अध्ययन करना चाहिए।

निष्कर्ष

लाल भिंडी एक आकर्षक, पोषणयुक्त एवं आर्थिक रूप से संभावनाशील विशेष सब्जी फसल है। इसमें उपस्थित एंथोसायनिन जैसे प्राकृतिक रंगद्रव्य और एंटीऑक्सीडेंट गुण इसे सामान्य हरी भिंडी से अलग पहचान प्रदान करते हैं।

वर्तमान समय में स्वास्थ्य के प्रति जागरूकता तथा पोषणयुक्त खाद्य पदार्थों की बढ़ती मांग लाल भिंडी के व्यावसायिक महत्व को बढ़ा रही है। उचित किस्म का चयन, गुणवत्तापूर्ण बीज, वैज्ञानिक खेती की तकनीक, संतुलित पोषण, उचित सिंचाई, खरपतवार नियंत्रण तथा समेकित कीट एवं रोग प्रबंधन अपनाकर किसान इस फसल से अच्छा उत्पादन प्राप्त कर सकते हैं। लाल भिंडी कृषि विविधीकरण और उच्च मूल्य वाली खेती के लिए एक महत्वपूर्ण विकल्प बन सकती है। विशेष रूप से छोटे एवं सीमांत किसान स्थानीय बाजार की मांग के अनुसार सीमित क्षेत्र से इसकी खेती प्रारंभ कर सकते हैं।

भविष्य में वैज्ञानिक अनुसंधान, गुणवत्तापूर्ण बीज उपलब्धता, किसान प्रशिक्षण तथा बेहतर विपणन व्यवस्था के माध्यम से लाल भिंडी को भारत की प्रमुख विशेष सब्जियों में शामिल किया जा सकता है। यह फसल किसानों की आय बढ़ाने के साथ-साथ उपभोक्ताओं को आकर्षक एवं पोषणयुक्त सब्जी उपलब्ध कराने में भी महत्वपूर्ण योगदान दे सकती है।





परंपरागत मखाने का महत्व एवं उपयोग

डा० सुनील कुमार मंडल- सहायक प्राध्यापक, क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, झंझारपुर,

डा० राजेन्द्र प्रसाद केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय, पूसा, समस्तीपुर, बिहार

अनिता कुमारी- सहायक प्राध्यापक, कृषि विज्ञान केन्द्र सवौर, बिहार कृषिविश्वविद्यालय, भागलपुर, बिहार

मखाना (फाक्स नट) एक जलीय नकदी फसल है, जिसका उपयोग औषधि और भोजन दोनों के रूप में किया जाता है जो अर्थव्यवस्था के क्षेत्र में बहुत विकास की संभावना है। मखाना उच्च पोषण मूल्य, कई चिकित्सा पद्धतियों और स्वास्थ्य सुरक्षा में प्रभावी होता है।

मखाना का पोषण महत्व

पाप मखाना (लावा) में प्रोटीन, खनीज एवं कार्बोहाइड्रेट की उच्च मात्रा के साथ वसा की कमी के कारण उपभोक्ताओं के द्वारा उपयोग किये जाने वाले सबसे सामान्य सूखे फलों में से एक हैं। यह 10-12 प्रतिशत प्रोटीन की मात्रा के साथ पौष्टिक और स्वस्थ भोजन माना जाता है। अन्य सुखे मेवे जैसे काजू, बादाम, अखरोट और नारियल की तुलना में मखाने में श्रेष्ठ गुणवत्ता का शर्करा, प्रोटीन, एस्काविक एसिड और फिनील पाया जाता है। इसके छिलके (कर्नल) में 16 प्रकार के एमिनो एसिड मौजूद होते हैं, कच्चे (बीज) और तले हुए (लावा) दोनों प्रकार के मखाना आवश्यक अमीनों एसिड में काफी समृद्ध होते हैं।

सारणी: मखाना बीज और पाण्ड (लावा) मखाना के पोषण सामग्रियों का तुलनात्मक विवरण:

क्र.सं.	मापदंड	कच्चे मखाना (बीज)	पाप मखाना (लावा)
1	प्रोटीन (% वजन)	7.2	8.7
2	कार्बोहाइड्रेट (% वजन)	57.0	79.8
3	वसा (% वजन)	0.3	0.5
4	नमी (% वजन)	34.7	10.4

5	कुल राख (% वजन)	0.3	0.4
6	कच्चे फाइबर (% वजन)	0.5	0.2
7	एमाइलोज (%)	19.0	18.2
8	कैलोरिफिक (उष्णता) मूल्य (किलो कैलोरी/100 ग्राम)	259	358
9	फास्फोरस (मिलीग्राम/100 ग्राम)	66.1	53.2
10	पोटेशियम (मिलीग्राम/100 ग्राम)	35.6	42.0
11	आयरन (मिलीग्राम/100 ग्राम)	0.8	1.4
12	कैल्शियम (मिलीग्राम/100 ग्राम)	9.5	18.5
13	मैग्नीशियम (मिलीग्राम/100 ग्राम)	11.3	13.9
14	सोडियम (मिलीग्राम/100 ग्राम)	48.2	71.0
15	कापर (मिलीग्राम/100 ग्राम)	0.3	0.5
16	मैगनीज (मिलीग्राम/100 ग्राम)	0.9	1.3
17	ज़िंक (मिलीग्राम/100 ग्राम)	0.9	1.1

मखाना के आवश्यक अमीनो एसिड इंडेक्स (ई.ए.ए.आई.) और रासायनिक स्कोर (सी.एस.) से संबंधित मूल्य मछली के करीब हैं। कच्चे मखाना (बीज) और पाप मखाना (लावा) में ई.ए.ए.आई. क्रमशः 93 प्रतिशत और 89 प्रतिशत है जो चावल (83 प्रतिशत), गेहूँ (65 प्रतिशत), चना (81.5 प्रतिशत), गाय के दूध (88.8 प्रतिशत), मछली (89.2 प्रतिशत) और मटन (87.24 प्रतिशत) की मात्रा से अधिक है। अनाज की तुलना में मखाना प्रोटीन (10.14 प्रतिशत) कम होता है। लेकिन फिर भी मखाना उच्च ई.ए.ए.आई. और सी.एस. के कारण कई पौधों और जानवरों पर आधारित आहार से बेहतर है।



मखाना का औषधिय महत्व

मखाना एक पौष्टिक, लो कैलोरी स्नैक है जो प्रोटीन, वसा, कैल्शियम और एंटीआक्सीडेंट से भरपूर है। यह वजन घटाने, बेहतर हृदय स्वास्थ्य, मधुमेह नियंत्रण, हड्डियों को मजबूती और बेहतर पाचन में मदद करता है। ग्लूटेन-फ्री होने के साथ ही यह उर्जा का उत्तम स्रोत है।

मखाना खाने के मुख्य स्वास्थ्य लाभ

- ❖ **वजन प्रबंधन:** मखाने में कैलोरी बहुत कम और फाइबर अधिक होता है। इसे खाने से पेट लम्बे समय तक भरा रहता है, जिससे भूख कम लगती है। परिणाम स्वरूप वजन कम करने में मदद मिलती है।
- ❖ **मधुमेह नियंत्रण:** मखाने का कम ग्लाइसेमिक इंडेक्स रक्त शर्करा के स्तर को अचानक बढ़ने से रोकता है, जो मधुमेह के मरीजों के लिए उपयोगी है।
- ❖ **बेहतर हृदय स्वास्थ्य:** मखाने में पोटेशियम और मैग्नेशियम उच्च मात्रा होती है, जो रक्त चाप को नियंत्रित करता है और हृदय को स्वस्थ रखने में सहायक होता है।
- ❖ **हड्डियों की मजबूती:** मखाना में कैल्शियम की मात्रा भरपूर होने के कारण हड्डियों और दांतों को मजबूत बनाने में मदद करता है।
- ❖ **पाचन में सुधार:** मखाने में उच्च फाइबर (रेशा) होता है, जो पाचन तंत्र को मजबूत करने के साथ-साथ कब्ज जैसी समस्याओं से राहत दिलाता है।
- ❖ **तनाव और नींद में सहायक:** मखाने में सूजन-रोधी और शांत करने वाले गुण होते हैं, जो तनाव कम करने और नींद की गुणवत्ता में मदद कर सकते हैं।
- ❖ **एंटीआक्सीडेंट गुण:** मखाना एंटीआक्सीडेंट का बेहतरीन स्रोत है, शरीर को विषाक्त पदार्थों (फ्री-रेडिकलस) से बचाता है और उम्र बढ़ने के लक्षणों को कम करने में सहायता करता है।
- ❖ **हृदय स्वास्थ्य में सुधार:** मखाने में कोलेस्ट्रॉल और संतृप्त वसा कम होता है जो हृदय के लिए स्वास्थ्य वर्धक है।
- ❖ **किडनी के लिए लाभदायक:** मखाने में भरपूर मात्रा में कसैले गुण मौजूद होते हैं, जिससे किडनी को सुचारू रूप से काम काज के लिए सभी आवश्यक पोषक तत्वों को अवशोषित कर लेता है।
- ❖ **प्राकृतिक विष हरण एजेंट:** मखाने को प्राकृतिक डिटासिफाइंग (विषमुक्त) एजेंट माना जाता है। मखाने में कुछ ऐसे यौगिक होते हैं जो शरीर के सभी संचित विषाक्त पदार्थों को बाहर निकालने में मदद करते हैं। मखाना खाना तिल्ली (स्प्लीन) के लिए उपयुक्त है, क्योंकि

यह लाल रक्त कोशिकाओं को पुनरावृत्ति करने और सफेद रक्त कोशिकाओं और प्लेटलेट्स को बहाल करने में सहायता करता है।

- ❖ **प्रोटीन का अंतिम स्रोत:** मखाना उच्च प्रोटीन सामग्री से भरपूर होता है और शरीर के लिए एक आवश्यक पोषक तत्व है, जो जीवन के समुचित विकास में सहायक होता है। मखाने से भरी एक कटोरी (लगभग 30-35 ग्राम) प्रतिदिन भूखे पेट सुबह के समय में खाने से कैलोरी के मीटर में उतार-चढ़ाव के बिना भरपूर उर्जा मिलेगी।
 - ❖ **उर्जा बढ़ाने वाला (शक्ति वर्धक):** मखाना शरीर की थकावट एवं कमजोरी को दूर कर शरीर में तुरंत उर्जा प्रदान करता है।
 - ❖ **प्रजनन शक्ति में बढ़ोतरी:** मखाने में जिंक पोषक तत्व मौजूद रहता है जो पुरुषों में टेस्टोस्टेरोन (सेक्स हार्मोन) के स्तर को सही रख कर स्पर्म की संख्या और गुणवत्ता को बढ़ाने में मदद करता है।
 - ❖ **श्वसन-तंत्र प्रणाली का तरो-ताजा:** मखाना श्वसन-तंत्र प्रणाली को कार्याकल्प करने में मदद करता है। यह श्वसन-तंत्र को साफ करने और फेफड़ों में दिवाल के उपर जमा वलगम (कफ) को कम करने में सहायता करता है। इस प्रकार मखाना एक अच्छी श्वसन प्रणाली को बनाए रखने में सहायता करता है।
 - ❖ **गर्भवती महिलाओं के लिए लाभदायक:** मखाना प्रोटीन, मैग्नेशियम, फास्फोरस, आवश्यक खनीज लवण और पोषक तत्व के साथ शाकाहारी भोजन का प्रमुख स्रोत है जो पेट के अन्दर नवजात बच्चों को सही विकास के साथ-साथ माँ के लिए भी आवश्यक होता है। इसलिए गर्भवती महिलाओं को मखाना के लावा को खीर व कढ़ी बनाकर थोड़ी मात्रा में प्रतिदिन खिलाना चाहिए।
 - ❖ **तनाव निवारक:** मखाने में तनाव निवारक गुण होते हैं, जो तंत्रिका कोशिकाओं को सुधार कर उचित मात्रा और गुणवत्ता का हार्मोन्स और तांत्रिका संदेश वाहक (न्यूरो-ट्रान्समीटर) उत्पादन करते हैं। इस प्रकार तनाव कम करने का एक प्राकृतिक स्रोत है।
- यह प्रक्रिया मस्तिष्क, रीढ़ की हड्डी और पुरे शरीर के बीच सूचना भेजने के लिए आवश्यक है जिससे चलना, सोचना, महसूस करना जैसे कार्य नियंत्रित होते हैं।
- ❖ **मांसपेशियों के ऐंठन/ जकड़न को रोकना:** मखाने में मौजूद पोटैशियम और मैग्नेशियम शरीर के मांसपेशियों के ऐंठन को रोकने में सहायता करता है, जो अक्सर मांसपेशियों में ऐंठन का कारण बनते हैं। वे मांसपेशियों के लचीलापन की प्रक्रिया को बनाये रखने में मदद करते हैं।



मखाना का धार्मिक और सांस्कृतिक महत्व:

हिन्दू धर्म और संस्कृति में मखाना का बहुत अधिक धार्मिक और सांस्कृतिक महत्व है। इसे पवित्रता और देवी लक्ष्मी का प्रतीक माना जाता है जो निम्न उल्लेखित है:

- ❖ **देवताओं का भोजन:** मखाने को अक्सर देवताओं का भोजन कहा जाता है, इसलिए इसे उपवास, व्रत (विशेषकर नवरात्र) और पूजा-हवन में एक अनिवार्य प्रसाद के रूप में चढ़ाया जाता है।
- ❖ **लक्ष्मी और पवित्रता का प्रतीक:** मखाना माँ लक्ष्मी का प्रिय उपहार है। यह कमल फूल की तरह कीचड़ में उग कर भी शुद्ध रहता है, इसलिए इसे पवित्रता का प्रतीक माना जाता है।
- ❖ **शुभ कार्यों में उपयोग:** विवाह, गोद भराई, पूजा, धार्मिक संस्कार, जन्म और मृत्यु जैसे जीवन के हर विशेष अनुष्ठान में मखाने का प्रसाद का उपयोग आवश्यक माना जाता है। मिथिलांचल क्षेत्रों में मखाना का एक विशेष महत्व है क्योंकि यहाँ प्रसिद्ध कोजगरा लोक पर्व में नव विवाहित जोड़ों के लिए उपयोग किया जाता है।
- ❖ **सात्विक आहार:** उपवास के दौरान यह ऊर्जा का बेहतरीन स्रोत है, जो शरीर को कमजोर नहीं होने देता है और सात्विक माना जाता है।

इस प्रकार मखाना न केवल स्वादिष्ट आहार है, बल्कि यह शरीर को उर्जावान बनाए रखने और बीमारियों को दूर करने में भी मदद करता है।

मखाना का आर्थिक और सामाजिक महत्व:

मखाना का आर्थिक महत्व बहुत व्यापक है। यह मुख्य रूप से बिहार के लघु एवं सीमांत किसानों के लिए आय का मजबूत और स्थायी स्रोत है। कम लागत और जलवायु परिवर्तन के बावजूद टिकाऊ उत्पादन के कारण यह किसानों की आजीविका का मुख्य आधार है। वैश्विक स्तर पर “सुपर फूड” के रूप में बढ़ती मांग के चलते मखाना का निर्यात तेजी से बढ़ रहा है। मखाने के आर्थिक और सामाजिक महत्व को निम्न उल्लेखित बिंदुओं से समझा जा सकता है।

1. किसानों की आय एवं रोजगार सृजन:

- ❖ **मिथिलांचल क्षेत्र का वर्चस्व:** वैश्विक मखाना उत्पादन का लगभग 80 प्रतिशत हिस्सा अकेले बिहार (विशेषकर दरभंगा और मधुबनी जैसे मिथिला क्षेत्रों) से आता है।

- ❖ **वैकल्पिक फसल:** धान व मक्का जैसे पारंपरिक फसलों के नुकसान होने पर मखाना किसानों के लिए एक सुरक्षित और अधिक मुनाफे वाली नकदी फसल साबित होता है।
- ❖ **रोजगार सृजन:** मखाना की खेती, तुड़ाई, छंटाई और भूनने (पापिंग) की प्रक्रिया ग्रामीण क्षेत्रों में विशेष रूप से महिला और मछुआरा समुदायों (मल्लाह) को बड़े पैमाने पर रोजगार प्रदान करती है।

2. अंतर्राष्ट्रीय बाजार और निर्यात:

- ❖ **वैश्विक बाजार में उछाल:** स्वस्थ के प्रति जागरूक वैश्विक आबादी के बीच मखाना एक लोकप्रिय स्नैक बन गया है, जो निवेशकों और निर्यातकों के लिए अरबों रुपये के अवसर पैदा कर रहा है।
- ❖ **निर्यात क्षमता:** भारत से अमेरिका, यूरोप और मध्य पूर्व के देशों में मखाने का निर्यात लगातार बढ़ रहा है।

3. सरकारी सहायता और आधुनिकीकरण:

- ❖ **मखाना बोर्ड:** मखाने का उत्पादन, अनुसंधान और अंतर्राष्ट्रीय विपणन को संगठित करने के लिए बिहार में मखाना बोर्ड की स्थापना की गई है। इससे किसानों की आय बढ़ाने और आधुनिक तकनीक के इस्तेमाल को बढ़ावा मिल रहा है।

4. स्वास्थ्य और पोषण उद्योग:

- ❖ **पोषक तत्वों का खजाना:** मखाना प्रोटीन, कैल्शियम, मैग्नीशियम और एंटीआक्सीडेंट का बेहतरीन स्रोत है, जो हड्डियों को मजबूत बनाने और मधुमेह को नियंत्रित रखने में मदद करता है।
- ❖ **उद्योगों में उपयोग:** मखाना की इसी पौष्टिकता के कारण प्रोसेस्ड फूड, आर्युवेदिक दवाओं और कास्मेटिक उद्योगों में मखाने की भारी मांग है।

निष्कर्ष

मखाने को दैनिक आहार में शामिल करना समग्र मानव स्वास्थ्य के लिए उत्तम विकल्प है। यह उर्जावान रखने के साथ-साथ कई बीमारियों से भी बचाता है। साथ ही महत्वपूर्ण पहलुओं में मखाने का औषधिय, धार्मिक, सांस्कृतिक, आर्थिक और सामाजिक का व्यापक महत्व है।





काला नमक चावल : पारंपरिक एवं पोषक तत्व से भरपूर

डॉ. सुनील कुमार- सहायक प्रोफेसर, डॉ लक्ष्मीकांत त्रिपाठी- सहायक प्रोफेसर, प्रोफेसर पी. के. जैन- डीन, कृषि संकाय
तीर्थकर महावीर कॉलेज ऑफ एग्रीकल्चर साइंस, तीर्थकर महावीर यूनिवर्सिटी, मुरादाबाद, उत्तर प्रदेश
प्रोफेसर आर. सी. चौधरी- अध्यक्ष, पी.आर.डी.एफ., गोरखपुर, उत्तर प्रदेश

भारत कृषि प्रधान देश है और यहाँ विभिन्न प्रकार के अनाज एवं धान की अनेक पारंपरिक किस्में सदियों से उगाई जाती रही हैं। इन्हीं विशिष्ट एवं पारंपरिक धान की किस्मों में काला नमक चावल का विशेष स्थान है। काला नमक चावल मुख्य रूप से उत्तर प्रदेश के पूर्वी भाग, विशेषकर सिद्धार्थनगर और आसपास के क्षेत्रों में पारंपरिक रूप से उगाया जाता है। इसकी पहचान इसके विशिष्ट सुगंध, स्वाद, रंग और पोषण संबंधी गुणों के कारण होती है। इसे 'बुद्ध का प्रसाद' भी कहा जाता है। चावल के पोषक गुण देखते हुए इस समय एशिया एवं यूरोपीय देशों में काफी मांग है।

काला नमक (Kalanamak) चावल को GI Tag उत्तर प्रदेश के 11 जिलों के निर्धारित भौगोलिक क्षेत्र के लिए प्राप्त है। भारत सरकार के GI रिकॉर्ड में "Kalanamak (Rice)" पंजीकृत है।

तालिका 1. काला नमक (Kalanamak) चावल के GI जिले

मंडल	जिले
गोरखपुर मंडल	1. गोरखपुर 2. देवरिया 3. कुशीनगर 4. महाराजगंज
बस्ती मंडल	5. बस्ती 6. संत कबीर नगर 7. सिद्धार्थनगर
देवीपाटन मंडल	8. गोंडा 9. बलरामपुर 10. बहराइच 11. श्रावस्ती

काला नमक चावल का नाम सुनकर ऐसा लग सकता है कि चावल का रंग काला होता है, लेकिन वास्तव में इसके दाने सामान्यतः भूरे या हल्के रंग के होते हैं और इसका नाम इसकी पारंपरिक पहचान तथा भूसी के रंग से संबंधित है। पकने के बाद इसमें विशेष प्रकार की प्राकृतिक सुगंध आती है, जो इसे अन्य सामान्य चावल की किस्मों से अलग बनाती है।

आज के समय में जब लोग स्वाद के साथ-साथ पौष्टिक और पारंपरिक खाद्य पदार्थों को अधिक महत्व दे रहे हैं, काला नमक चावल का महत्व बढ़ रहा है। यह केवल एक खाद्य फसल नहीं है, बल्कि किसानों की पारंपरिक कृषि, स्थानीय संस्कृति और जैव-विविधता से भी जुड़ा हुआ है।

काला नमक चावल का ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक महत्व

काला नमक चावल उत्तर प्रदेश की प्राचीन धान परंपरा से जुड़ी एक महत्वपूर्ण किस्म है। विशेष रूप से सिद्धार्थनगर और पूर्वांचल के अन्य क्षेत्रों में इसकी खेती लंबे समय से की जाती रही है। स्थानीय किसानों ने पीढ़ी-दर-पीढ़ी इसके बीजों को सुरक्षित रखा और इसकी खेती की परंपरा को आगे बढ़ाया।

इस चावल की विशिष्टता को देखते हुए "सिद्धार्थनगर काला नमक चावल" को भौगोलिक संकेतक (GI) पहचान भी प्राप्त हुई है।



इससे इसकी विशिष्ट क्षेत्रीय पहचान और किसानों के लिए इसके मूल्य को बढ़ावा देने में सहायता मिल रहा है।

काला नमक चावल की प्रमुख विशेषताएँ

काला नमक चावल की सबसे प्रमुख विशेषता इसकी प्राकृतिक सुगंध है। पकाते समय इससे एक मनमोहक खुशबू आती है, जिसके कारण इसे सुगंधित चावल की श्रेणी में रखा जाता है। इसका स्वाद भी सामान्य चावल की तुलना में अलग और विशिष्ट माना जाता है। चावल ठंडा होने पर मुलायम रहता है।

इसकी प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं—

1. **विशिष्ट प्राकृतिक सुगंध** – पकने पर इसमें आकर्षक सुगंध आती है।
2. **पारंपरिक धान की किस्म** – यह स्थानीय कृषि परंपरा से जुड़ी हुई है।
3. **विशिष्ट स्वाद** – इसका स्वाद सामान्य चावल से अलग होता है।
4. **पोषक तत्वों का स्रोत** – चावल शरीर को ऊर्जा प्रदान करने वाले कार्बोहाइड्रेट का प्रमुख स्रोत है तथा इसमें कुछ मात्रा में प्रोटीन, खनिज एवं अन्य पोषक घटक पाए जाते हैं।
5. **जैव-विविधता का संरक्षण** – पारंपरिक किस्मों की खेती कृषि जैव-विविधता को बनाए रखने में योगदान देती है।

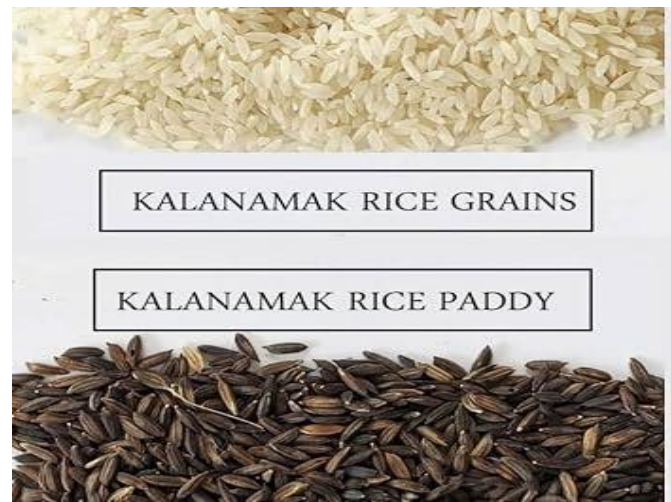
तालिका 2. स्थानीय चावल और काला नमक चावल के पोषक गुण (R-FRAC, लखनऊ, 2020)

S.N.	मापदंड	सामान्य	काला नमक चावल की किस्में			
			के एन-3	बौना काला नमक 101	बौना काला नमक 102	काला नमक किरण
1	Amylose	24%	21 %	22%	22 %	21%
2	Protein	5-6%	10.61%	10.5%	10.6%	10.6%
3	Fat	0.52	0.51%	0.51	0.51	0.51
4	Iron/ 100g	1.0/100g	3.0 mg	4.35 mg	4.55 mg	4.81mg
5	Zinc ppm	0.1	16.97	14.35	14.55	16.37
6	Carbohydrate	88%	87.96 %	88%	88%	88%
7	Glycaemic Index	85%	49-52 %	49-52%	49-52%	49-52%
8	Beta carotene/ 100mg	0*	0.42 mg	0.40 mg	0.42 mg	0.42 mg

*0.31 mg/100g (Golden rice)

स्वास्थ्य की दृष्टि से काला नमक चावल

आजकल लोगों में स्वस्थ और संतुलित आहार के प्रति जागरूकता बढ़ रही है। इसी कारण पारंपरिक अनाज और धान की किस्मों की मांग भी बढ़ रही है। काला नमक चावल को भी इसी संदर्भ में देखा जा सकता है। इस चावल में प्राप्त मात्रा में प्रोटीन, आयरन, जिंक एवं विटामिन ए उपलब्ध है जो विटामिन ए आंखों के लिए बहुत फायदा होता है। तथा ग्लाइसेमिक इंडेक्स कम होने के कारण मधुमेह रोगियों के लिए यह अच्छा चावल है।



6. **किसानों के लिए विशेष बाजार** – गुणवत्तापूर्ण और विशिष्ट सुगंधित चावल के रूप में इसका बाजार मूल्य सामान्य चावल की तुलना में बेहतर है पोषक तत्व के वजह से।

काला नमक चावल का पोषण महत्व

काला नमक चावल को पौष्टिक चावल के रूप में विशेष पहचान मिल रही है। जो तालिका में नीचे दिया गया है।

यदि काला नमक चावल को दाल, हरी सब्जियों, मौसमी सब्जियों, सलाद और अन्य पौष्टिक खाद्य पदार्थों के साथ लिया जाए तो यह संतुलित भोजन का हिस्सा बन सकता है।

कृषि की दृष्टि से महत्व

काला नमक चावल केवल पोषण की दृष्टि से ही महत्वपूर्ण नहीं है, बल्कि कृषि एवं ग्रामीण अर्थव्यवस्था में भी इसका योगदान हो सकता है। पारंपरिक एवं विशिष्ट किस्मों की मांग बढ़ने पर किसानों को सामान्य चावल की तुलना में बेहतर बाजार अवसर प्राप्त हो रहा है।



किसानों के लिए इसकी खेती में निम्नलिखित अवसर हो सकते हैं—

- ✓ विशिष्ट बाजार के लिए उत्पादन।
- ✓ स्थानीय ब्रांडिंग एवं पैकेजिंग।
- ✓ किसान उत्पादक संगठन (FPO) के माध्यम से सामूहिक विपणन।
- ✓ मूल्य संवर्धित उत्पादों का निर्माण।
- ✓ जैविक एवं प्राकृतिक खेती से जोड़ने की संभावना।
- ✓ पर्यटन एवं स्थानीय खाद्य संस्कृति से जोड़कर विपणन।
- ✓ ऑनलाइन और प्रत्यक्ष बाजारों में बिक्री।

हालांकि किसान को इसकी खेती अपनाने से पहले उपयुक्त किस्म, क्षेत्र की जलवायु, बीज की उपलब्धता के बारे में अध्ययन करना चाहिए।

काला नमक चावल का मूल्य संवर्धन

काला नमक चावल से केवल सामान्य भोजन ही नहीं, बल्कि विभिन्न मूल्य-वर्धित खाद्य पदार्थ भी तैयार किए जा सकते हैं। उदाहरण के लिए: काला नमक चावल की खीर, पुलाव, खिचड़ी, इडली एवं अन्य पारंपरिक व्यंजन, चावल के आटे से बने खाद्य पदार्थ, पारंपरिक मिठाइयाँ। मूल्य संवर्धन से किसानों और ग्रामीण उद्यमियों को अतिरिक्त आय के अवसर प्राप्त हो रहा है।

काला नमक चावल की खेती में संभावनाएँ

काला नमक चावल की खेती को बढ़ावा देने के लिए वैज्ञानिक कृषि प्रबंधन आवश्यक है। प्रमाणित एवं गुणवत्तापूर्ण बीज का उपयोग, उचित खेत तैयारी, संतुलित पोषक तत्व प्रबंधन, खरपतवार नियंत्रण, रोग एवं कीट प्रबंधन तथा उचित समय पर कटाई इसके उत्पादन को प्रभावित करते हैं।

किसानों को उन्नत उत्पादन तकनीक, उन्नत बीज, जल प्रबंधन, जैविक एवं एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन तथा बाजार से जुड़ी

जानकारी कृषि विभाग उत्तर प्रदेश एवं पीआरडीएफ संस्था गोरखपुर प्रदान कर रहा है। पीआरडीएफ संस्था काला नमक चावल पर 26 साल से कम कर रहा है। इसका बीज एवं पैदा करने की संपूर्ण विधि पीआरडीएफ गोरखपुर (दूरभाष 0551-2284003) के पास उपलब्ध है। इसके अलावा GI टैग की पहचान का उपयोग करते हुए क्षेत्र-विशिष्ट ब्रांडिंग की जा रही है। इससे उपभोक्ताओं को वास्तविक उत्पाद पहचानने और किसानों को बेहतर बाजार उपलब्ध कराने में सहायता मिल रही है।

निष्कर्ष

काला नमक चावल भारत की समृद्ध कृषि जैव-विविधता और पारंपरिक खाद्य संस्कृति का एक महत्वपूर्ण उदाहरण है। इसकी विशिष्ट सुगंध, स्वाद, सामान्य चावल से अधिक पोषक गुण हैं। यह कार्बोहाइड्रेट और अन्य पोषक तत्वों का स्रोत होने के कारण संतुलित आहार का हिस्सा एवं ग्लाइसेमिक इंडेक्स कम होने के कारण मधुमेह रोगियों के लिए यह अच्छा चावल है।

काला नमक चावल का महत्व केवल भोजन तक सीमित नहीं है। यह किसानों की आजीविका, ग्रामीण अर्थव्यवस्था, पारंपरिक ज्ञान, कृषि जैव-विविधता और स्थानीय संस्कृति से भी जुड़ा हुआ है। उचित वैज्ञानिक प्रबंधन, गुणवत्तापूर्ण बीज, बेहतर प्रसंस्करण, ब्रांडिंग और बाजार व्यवस्था के माध्यम से इसकी खेती को अधिक लाभकारी बनाया जा सकता है। चावल के पोषक गुण देखते हुए इस समय एशिया एवं यूरोपीय देशों में काफी मांग है।

आज आवश्यकता है कि पारंपरिक फसलों को आधुनिक कृषि विज्ञान और बाजार व्यवस्था से जोड़ा जाए। काला नमक चावल इस दिशा में एक महत्वपूर्ण उदाहरण है, जो परंपरा और आधुनिक पोषण जागरूकता के बीच एक मजबूत कड़ी स्थापित करता है।



कृषक मंच - नवम्बर 2026 संस्करण

लोकप्रिय लेखों के लिए आमंत्रण

वेबसाइट: krishakmanch.com



अंतिम तिथि: 28 नवम्बर 2026



लेख के विषय:

- कृषि विज्ञान के प्रमुख क्षेत्र: एग्रोनॉमी, बागवानी, कीट विज्ञान, रोग विज्ञान, कृषि प्रसार, कृषि अर्थशास्त्र, जैव प्रौद्योगिकी आदि।
- नवीनतम कृषि तकनीकें।
- फसल प्रबंधन एवं रोग नियंत्रण।
- जैविक खेती एवं प्राकृतिक कृषि।
- जल संरक्षण व सिंचाई तकनीकें।
- सरकारी योजनाएं।

हमारे व्हाट्सएप समूह से जुड़ें:

